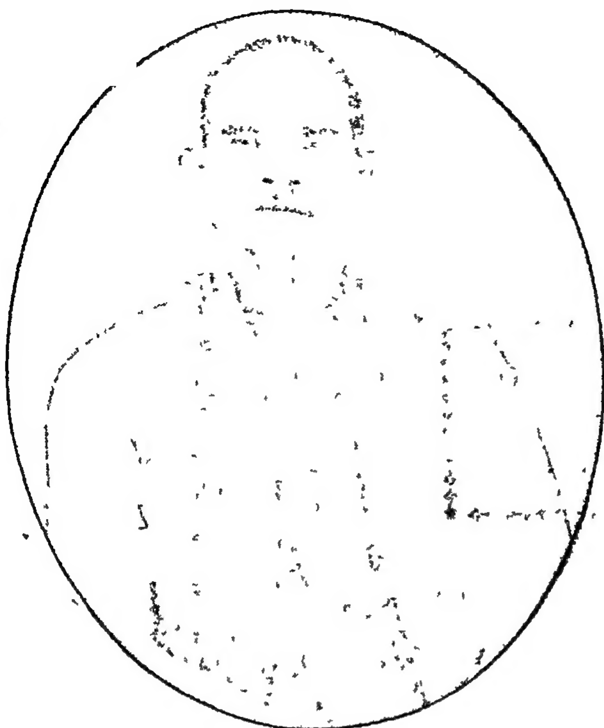


श्री कुञ्ज बिहारी स्मृति सुमन

सम्पादक
गोविन्द अग्रवाल

प्रकाशक :—
लोक संस्कृति शोध संस्थान
नगर-श्री चूरू

प्रकाशक —
लोक संस्कृति शोध संस्थान
नगर श्री-चूरू
चूरू

मुद्रक —
अतुल प्रिंटिंग प्रेस
चूरू
(राजस्थान)

संवत्
२०२६ वि०

चार रुपये

* अनुक्रम *

खण्ड १: श्रद्धाञ्जलि और संस्मरण

खण्ड—२

कुञ्ज कुसुमाञ्जलि

कुञ्जविहारी शर्मा बी० ए० साहित्यरत्न



खण्ड—३

जैन धर्म को चूरू जिले की देन

गोविन्द अग्रवाल, चूरू



दो शब्द........

श्री कुञ्जविहारी जी के नाम के साथ 'स्वर्गीय' जोड़ते हुए मन को बड़ी पीडा होती है, लेकिन निरुपाय हूं। स्व० विहारी जी के सम्बन्ध में उन के अनेक स्नेहीजनों ने अपने आत्मिक उद्गार प्रस्तुत स्मृति सुमन में प्रकट किये है, जिन से उन के सम्बन्ध में बहुत कुछ जाना जा सकेगा। मेरा उन से लगभग ३० वर्षो से घनिष्ठ संपर्क था और इस अवधि के घरेलू और व्यक्तिगत संस्मरणों की सूची बहुत बडी है। लेकिन यहां केवल अपने और नगर-श्री के साथ उन के संपर्क के सम्बन्ध में दो ही शब्द कहना चाहूंगा।

विहारी जी उम्र में मेरे से २-३ वर्ष बड़े थे। मैं अपनी रुचि के अनुसार अनेक साहित्यिक, सामाजिक और सास्कृतिक कार्यो में रत रहता आया हूं, लेकिन प्राय: प्रत्येक कार्य मे मैं उन की सलाह और सहयोग प्राप्त करता था। अपनी सीमित साधन परिधि में भी जब लगन और श्रम से मैं कोई कार्यक्रम संजोता, तो वे मुझे सदैव ही उद्बोधक शब्दो से प्रोत्साहित करते। मैंने उन के साथ अनेक कवि सम्मेलन, साहित्य गोष्ठिया, उत्सव-महोत्सव आदि किये हैं, और उन मे हमारा हार्दिक सहयोग रहा है। लेकिन उन सब में "नगर-श्री चूरु" की स्थापना, उस के उद्देश्य तथा आयोजन उन्हें सर्वाधिक उपयोगी और आवश्यक प्रतीत हुए। इस लिए विहारीजो संस्था की गति विधियों में सदैव रुचि पूर्वक सहयोग देते रहे।

नगर-श्री के समारोहो के संयोजन का काम यद्यपि मेरा था, लेकिन इन का सञ्चालन प्राय: विहारी जी के सरस और साहित्यिक मुहावरेदार वाक्यों से ही शुरू होता था। मेरो दृष्टि में इस कार्य के लिए उन से अधिक उपयुक्त व्यक्ति नहीं था। मै जब भी उन के घर पर जा कर उन्हें नगर-श्री में होने वाले किसी विशिष्ट कार्यक्रम की सूचना देता तो वे आनन्द विभोर हो कर स्नेह स्निग्ध शब्दों में कहते, "ठीक है आऊगा अवश्य, समारोह का लाभ और आनन्द मैं भी लूंगा,लेकिन संचालन वगैरह का कार्य तुम्हे ही संभालना होगा।" ऐसा प्राय. वे सदैव ही कहते थे, लेकिन नगर-श्री के समारोहों का संचालन वे ही करते थे। संचालक के रूप में हो वे अधिवेशन के प्रयोजन, उद्देश्य और उस की आवश्यकता को इस ढंग से प्रस्तुत कर देते थे कि मुझे कुछ कहने की आवश्यकता ही नही पड़ती थी। एक रूपक सा बंध जाता था, श्रोता और वक्ता सभी गद्गद हो जाते थे। मैं तो उन को पीठ के पीछे बैठा आयोजन का आनन्द लेता रहता था।

मैंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि विहारीजो अचानक इस प्रकार चले जाएंगे और उस के बाद उन की शोक सभा से हो मुझे संयोजन कार्य शुरू करना होगा। दिनांक २२ सितम्बर, १९६८ की दो पहर को जब जिलाधीश

महोदय श्रीराम प्रियदर्शी की अध्यक्षता म नगर श्री के सभा भवन में जब शोक सभा हुई तो उपस्थिति के गीले नेत्रो ने मेरी शोक विह्वल लडखडाती जुबान को भी मानो जकड दिया।

स्व० बिहारी जी की स्मृति को स्थाई बनाने हेतु नगर श्री ने "कुञ्जविहारी ग्रंथ माला" प्रारभ की, जिस के अ तगत "बाता री चाल" नाम से उन का राजस्थानी कथा सकलन प्रकाशित किया गया जो बडा लोक प्रिय हुआ। इसी ग्रंथ माला का दूसरा पुष्प "कुञ्जविहारी स्मृति सुमन" है। पहले स्मृति सुमन में स्वर्गीय आत्मा के प्रति व्यक्त किये गये उन के स्नेही जना के हार्दिक उद्गारो और श्रद्धाञ्जलियो आदि के सकलन का ही विचार लिया गया था और तदनुसार ही मुद्रण व्यवस्था की गई थी। मुद्रण सहयोगी थे श्री सावलराम जी शर्मा, श्री महिला अणुव्रत समिति, श्री सोहनलाल जी हीरावत और श्री रावतमल जी बेद।

लेकिन बाद मे स्मृति सुमन को अधिक उपयोगी और स्थाई बनाने के विचार से इस म पर्याप्त परिवद्ध न किया गया। श्री कुञ्जविहारी जी ने समय समय पर राष्ट्र प्रेम मे सनी हुई अनेक उद्बोधक कविताए लिखी थी, उन म से जो हस्तगत हो सकी उन का समावेश इस स्मृति सुमन में किया गया, राष्ट्र प्रेम और भारतीय सस्कृति के प्रति उन का स्नेह इन कविताओ के प्रत्येक शब्द से फूटा पडता है। ये कविताए इतनी प्रेरक हैं कि राष्ट्रीय पर्वों पर इ हे आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रो से प्रसारित किया जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों में जैन धम के प्रति बिहारी जी का आकषण बहुत बढ गया था। जन धम को चूरू जिले को बहुत बडी देन रही है, लेकिन इस पर अब तक कोई प्रकाश नही डाला गया था। इस लिए स्मृति सुमन में अत्यत श्रम से तैयार किया गया एक विशेष लेख "जैन धम को चूरु जिले की देन" जोडा गया है। अनेक चित्र भी और तैयार करवा कर लगाये गये हैं। इस सारी सामग्री से स्मृति सुमन की उपादेयता मे निश्चय ही बहुत अधिक वद्धि हो गई है। लेकिन साथ ही सुमन का कलेवर भी दुगना हो गया। इस के अतिरिक्त मुद्रण व्यय आदि की सारी व्यवस्था श्री बिहारी जी के प्रिय शिष्य श्री फतेहच द जी भीमसरिया ने की है।

स्मृति सुमन के लिए सदेश सस्मरण आदि प्रेषित करने वाले सज्जनो व अन्य सहयोगियो को भी धन्यवाद देना आवश्यक समझता हू। श्रद्धेय मुनि श्री महेन्द्रकुमार जी 'प्रथम', और पूज्यपाद श्री विद्याधरजी शास्त्री ने सदैव की भाति माग दशन दिया है। सम्मान्य श्री विश्वेश्वरदयाल जी गुप्ता ने रियायती दर पर स्मृति सुमन का मुद्रण विशेष रुचि पूवक किया है, जिस के लिए हार्दिक आभार प्रकट करना अपना पुनीत कतव्य समझता हू।

नगर-श्री

६-९ ६९

सुबोधकुमार अग्रवाल

मन्त्री



प्रतिभावान् साहित्यकार

यह जान कर मुझे अत्यन्त दुःख हुआ कि चूरू के प्रतिभावान् साहित्यकार और आदर्श अध्यापक श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा, बी० ए० साहित्यरत्न का दिनांक २० सितम्बर, ६८ को आकस्मिक देहांत हो गया।

श्री कुञ्जविहारीजी के सम्पर्क में मै भी आया हूं। वे एक योग्य एवं अनुभवी अध्यापक थे। बच्चों के साथ उनका प्रगाढ़ प्रेम था। उनके साथ वे घुल मिल कर खेल खेला करते थे तथा प्रेम व सहानुभूति से पढ़ाते थे तथा वे बालकों के बड़े प्रिय थे।

श्री कुञ्जविहारीजी के आकस्मिक निधन से चूरू-नगर की बड़ी क्षति हुई है। वे न केवल आदर्श अध्यापक ही थे बल्कि सामाजिक कार्यकर्ता भी।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूं कि वह उनकी दिवगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे।

जगन्नाथसिंह मेहता

शासन सचिव
शिक्षा, स्वास्थ्य एवं श्रम
राजस्थान सरकार
जयपुर, दिनांक १२-१०-६८



सजग साहित्यकार

श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा राजस्थान के सजग साहित्यकारों में से थे। उनकी साहित्यिक सेवायें सम्पूर्ण हिन्दी ससार के लिए बहुमूल्य रहेगी। उनका व्यक्तित्व और कृतित्व सजन और अनुभव दोनो ही दृष्टियो से ऐतिहासिक है। राजस्थान और विशेषकर चूरू के नागरिको को इस महान् साहित्यकार के असामयिक निधन से भारी क्षति हुई है। मैं स्वय उनके निकट सपर्क में रहा हू।

यह जानकर मन को सतोष और धर्य मिला है कि चूरू के साहित्य प्रेमी नागरिक साहित्य मनीषी स्वर्गीय श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा की स्मृति मे स्मृति सुमन' नामक ग्रथ का प्रकाशन करवा रहे है।

मुझे विश्वास है कि आपके कुशल सपादन मे श्री कुञ्जविहारी स्मृति सुमन सफलतापूर्वक प्रकाशित हो कर स्थायी स्मारक वन सकेगा।

शासन उपसचिव
शिक्षा (प्रकोष्ठ ४) विभाग
जयपुर १८ जुलाई १९६६

शुभेच्छु
मेघराज मुकुल



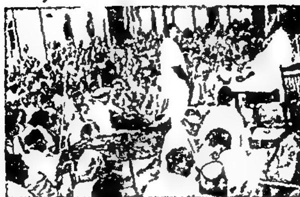
सर्वोदय आश्रम चूरू में श्री जैनेन्द्र कुमार और श्री विहारीजी

सेवा भावना के प्रतीक

श्री कुजविहारी शर्मा के अवसान से चूरू ने अपने एक अनन्य सेवक को खोया है। उनके स्थान की पूर्ति सभव नही दीखती। "नगर-श्री" ने उनकी स्मृति को चिर जीवी बनाने का सकल्प उठा कर योग्य कार्य ही किया है। आज हम लोगो का जीवन बाहर ही लालसाओं से घिर गया है। ऐसी स्थिति में बहुत आवश्यक है कि हम सेवा भावना के मूल्य के प्रतीक-पुरुषो के जीवन को उजागर करे और उनकी प्रतिष्ठा को बढ़ाएं। स्वर्गीय शर्मा जी ऐसे हो निस्स्वार्थ पुरुषों में से थे। मुझे भी उनका दर्शन लाभ हुआ था। कृपया जो भी श्रद्धा भेट आप उनकी स्मृति मे अर्पित करने की सोचते हो, उसमे मेरी भी कृतज्ञ श्रद्धाजलि सम्मिलित कर लीजियेगा।

जैनेन्द्र कुमार

पूर्वोदय प्रकाशन
८, नेताजी सुभाष मार्ग
देहली।
दि० ५-१०-६८



मुनि श्री महेन्द्र कुमार प्रथम के प्रवचन आयोजन मे जन सेवा सघ, चूरु के मत्री श्री कोठारी जी से विचार विमर्श करते हुए बिहारी जी

सरस्वती के सपूत

कुजविहारी जी सचमुच ही जन जन के हृन्य कुज मे विहार करने वाले थे। वे सरस्वती के सपूत, सौहार्द के सहोदर तथा शान्ति के सहज स्वरूप थे। उनका मिलन मधुर था। जितनी बार भी वे मेरे से मिले, मैं उनकी मधुरता में ओत प्रोत हो गया। अणुव्रत परिवार के वे एक प्रौढ सदस्य थे। उनके निधन से साहित्य, शिक्षा आदि अनेक क्षेत्रो में दुभर रिक्तता आई है।

—मुनि श्री नगराज

कार्तिक पूर्णिमा स० २०२५
सागर सदन, शाही बाग
अहमदाबाद—४



मुनि श्री महेन्द्र कुमार प्रथम द्वारा आयोजित अवधान कार्य-क्रम को सर्वांगीण सफल बनाने मे व्यस्त विहारी जी

रसिक सभा रो रूप

सरल पणो सज्जन पणो, सुघड पणो सद्ग्यान ॥
विनय विवेक विशालता, वत्सलता बहु मान ॥ १ ॥
हँस हँस मीठो बोलणो, रखणो सब सु प्रेम ॥
मिलणो मिश्री दूध ज्यू, हियो शुद्ध ज्यू हेम ॥ २ ॥
निज कर्तव्य निभाण मे, आवी गिणी न धूप ॥
आयोजन री आत्मा, रसिक सभा रो रूप ॥ ३ ॥
पडित प्रतिभावान हो, सुन्दर साहित्यकार ॥
अध्यापक हो अग्रणी, वर आचार विचार ॥ ४ ॥
सन्तजनां रो हो भगत, साहस रो हो शेर ॥
कुज विहारी ऊठग्यो, गुण रा पुज विखेर ॥ ५ ॥
ऊमर भर भूलै नही, (जो)रहग्यो एकर साथ ॥
अब वाने भूलावणा, सत्था थारै हाथ ॥ ६ ॥

—मुनि श्री सोहनलाल (चूरु)

योग्य अध्यापक और आदर्श मानव

जब मैंने श्री कुंजबिहारीजी के निधन का समाचार पढ़ा तो मुझे धक्का लगा और आखों के सामने अंधेरा छा गया। मुझे विश्वास भी नहीं हो सकता था कि ऐसे नियमित जीवन व्यतीत करने वाले का निधन इतना शीघ्र हो जावेगा जबकि आयु में वे मुझ से आठ वर्ष छोटे थे।

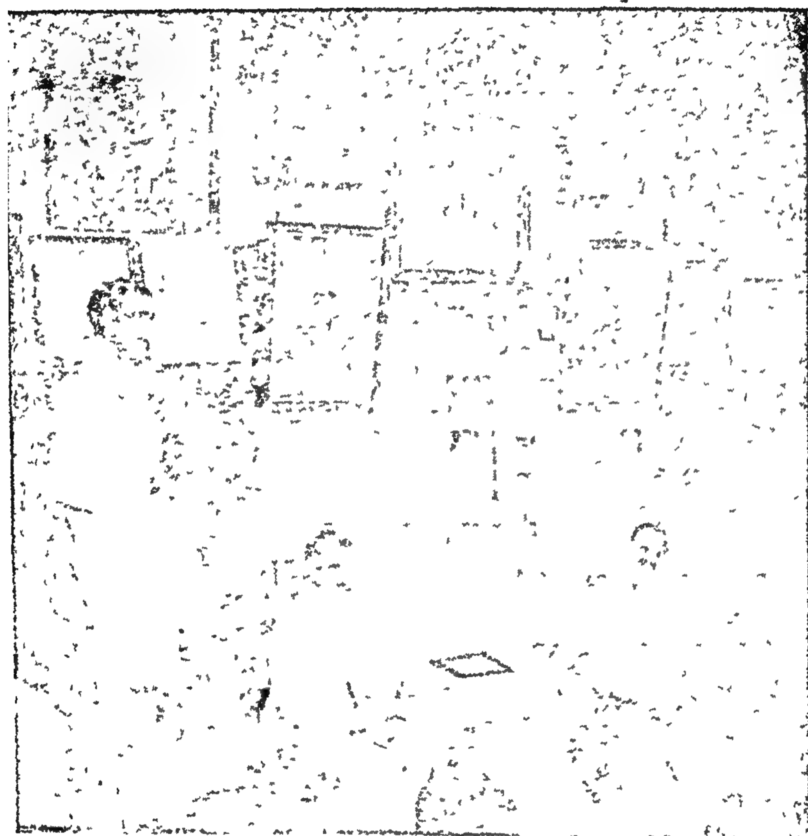
यह दुःखद समाचार पढ़ते ही मेरी स्मृति मुझे २२-२३ वर्ष पूर्व ले गई जब मैं उनके सम्पर्क में पहली बार आया। मुझे याद है उस समय वे ऋषिकुल आश्रम में अध्यापक का कार्य करते थे और मुझे अपने लोहिया कालेज में हिन्दी के अध्यापक की बहुत जरूरत थी। पहली ही भेंट में उनकी वाणी तथा स्वभाव से मैं इतना प्रभावित हुआ कि उनको तुरंत ही लोहिया कालेज में हिन्दी के अध्यापक का कार्य भार सम्भला दिया। जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया, मैं इस निर्णय के लिए अपने आप को धन्यवाद देता रहा। यह सौभाग्य ही था कि लोहिया कालेज के विद्यार्थियों को ऐसे अनुपम व्यक्ति से शिक्षा प्राप्ति का लाभ उठाने का अवसर मिला। बाद में मैंने उनको उच्च कक्षाओं यहां तक कि कालेज कक्षाओं को हिन्दी पढ़ाने का भार भी सौंप दिया और जो काम उन्होंने किया उससे मुझे पूर्ण संतोष हुआ।

श्री कुंजबिहारीजी न केवल हिन्दी साहित्य के अद्भुत विद्वान थे बल्कि साथ में एक योग्य अध्यापक और आदर्श मानव भी थे। उनका गूढ़ ज्ञान मीठी वाणी और सरल स्वभाव सब को मोहित किये बिना नहीं रहता था। उनमें समाज के प्रति सेवा की भावना भी थी। उनके साथी जिनमें से मैं भी एक हूँ और उनके विद्यार्थी कभी उनको नहीं भूल सकते। उनका आदर्श हमें सदा प्रेरणा देता रहेगा।

रामस्वरूप गुप्त

रजिस्ट्रार
उदयपुर विश्वविद्यालय,
उदयपुर १६-१०-१९६८

समाजभूषण पं० श्री विद्याधरजी शास्त्री एम. ए. जब
राष्ट्रपतिजी द्वारा विद्यावाचस्पति के सम्मान से
विभूषित होकर अपनी जन्मभूमि चूरू पधारे
तब नगर श्री चूरू



द्वारा
उनका हार्दिक अभिनन्दन किया गया
समारोह की अध्यक्षता श्री शिखरचन्द्रजी सत्र न्यायाधीश
ने की श्री कुन्जविहारीजी (खड़े हुए) अपने
उद्गार प्रकट कर रहे है।

उच्चकोटि के नागरिक

> वे प्रतिभाशाली विद्वान् तथा सुयोग्य अध्यापक होने के साथ ही उच्चकोटि के नागरिक एवं कमठ कार्यकर्ता भी थे।

प० कुञ्ज विहारीजी शर्मा के असामयिक स्वर्गवास का समाचार जान कर हृदय को बड़ा आघात पहुँचा। वे प्रतिभाशाली विद्वान् तथा सुयोग्य अध्यापक होने के साथ ही उच्चकोटि के नागरिक एवं कमठ कार्यकर्ता भी थे। उनके निधन से चूरू क्षेत्र को जो क्षति पहुँची है उसकी पूर्ति होना निकट भविष्य में असम्भव है। श्री भर्तृहरिजी महाराज ने ऐसे ही किसी आदर्श पुरुष को लक्ष्य कर लिखा था कि—

> सृजति तावदशेषगुणाकरं, पुरुष-रत्नमलङ्करणं भुवि।
> तदपि तत्क्षणभंगि करोति चेदहह कष्टमपण्डितता विधे॥

परम पिता परमात्मा से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि वे दिवंगत आत्मा को चिर शान्ति एवं उनके शोक संतप्त परिवार तथा विशाल स्नेही समुदाय को इस महान् दुःख को सहन करने की शक्ति प्रदान करें।

जिला एवं सत्र न्यायाधीश
झुंझनूं (राज०)
२६-६-५८

शिखरचन्द्र कोचर

वृन्दावन कुञ्ज विहारी



श्री विद्याधरजी शास्त्री

चूरू का यह पत्र उसके साहित्यिक कुञ्ज मे खाण्डव दाह का सूचक पत्र है। विहारीजी इस रीति से अकस्मात सब की आशाओ पर तुपारपात कर के महाकाश मे विलीन हो जाएँगे यह सभावना भी कभी किसी के मस्तिष्क मे नही आई थी। विहारीजी केवल दूसरे विहारी कवि ही नही अपितु प्रतिक्षण प्रसन्न चेता और व्यक्ति को अपने सरस, अनुपम वचनामृतों से परितृप्त कर देने वाले साक्षात् वृन्दावन कुञ्जविहारी थे। प्रत्येक व्यक्ति के प्रति उनका जो अगाध स्नेह था उस से वह यही समझता था कि उस के प्रति उनका अनन्य भाव विद्यमान है।

नगरश्री ने "कुन्जविहारी स्मृति सुमन" के प्रकाशन का जो सकल्प किया है वह साहित्यकार की पुण्य स्मृति मे समर्पित सबसे अधिक महत्तीय पुष्पाञ्जलि होगी। मुझे विश्वास है कि चूरू के नागरिक अपने इस कर्तव्य पालन मे पूर्णतया परिकर वद्ध हो कर प्रकृति गति द्वारा अपहृत चूरू के इस महान् साहित्य साधक को सदा के लिए अमर कर देगे।

हिन्दी विश्व भारती
वीकानेर
२६-६-६८

विद्याधर शास्त्री एम. ए.
विद्यावाचस्पति



अवधान आयोजन में विहारीजी प्रश्नकर्ताओं का आवाहन कर रहे है ।

अन्तर और बाह्य में एक रूप

भगवान् श्री महावीर की एक सूक्ति है "जहा अन्तो, तहा बाहि, जहा बाहि तहा अन्तो साधक अन्तर और बाह्य में सम होता है" । अध्यातम का गवेषी अपने मन वचन और कर्म मे कभी द्वैध नही होने देता । उसका चिन्तन, वुद्धि और प्रवृत्ति अभेद से सवलित होती है ।

> अधिकाशत श्रीमन्तो को आकर्षित करने वाला श्रमिको का श्रद्धेय नही बनता, पर विहारीजी इसके अपवाद थे

महात्मा और सामान्य आत्मा की विभेदक रेखा । मानसिक, वाचिक और कायिक प्रवृत्तियो की एक रूपता तथा अनेक रूपता ही बनती है । पर आज के युग में उसे ही चतुर कहा जाता है जो वाणी और कर्म को भिन्न भिन्न दिखा सके तथा चिन्तन से प्रतीप ही प्रवृत्ति कर सके । उन व्यक्तियो की सख्या विरल ही है, जो द्वैध को पाट कर स्वय को स्थिर चित्त रख सकें । प० कुजविहारीजी इस युग के चतुरो से सर्वथा भिन्न थे । उनके निकटतम साथियों तथा अन्य सकडो व्यक्तियो ने भी उन्हे कभी द्विरूप नही देखा ।

पं० विहारीजो के निकट परिकर में जहां छात्रों, श्रमिकों, अध्यापकों व साहित्यकारों की संख्या हजारों मे है, वहां श्रीमन्तों की सख्या भी कम नहीं है। अधिकांशतः श्रीमन्तों को आकर्पित करने वाला श्रमिकों का श्रद्धेय नही वनता, पर विहारीजो इसके अपवाद थे। वे सब के थे और सव उनके थे। उन्होने अपनी परिधि मे सबको समाहित किया था। अपनत्व और परत्व की भापा मे वे किसी से लगाव व दुराव नही रखते थे।

> उनका चितन, भाषा-प्रयोग व व्यवहार मित्र-अमित्र की परिधि से मुक्त था

उनका कोई अमित्र नही था। वे किसी के मित्र नही थे। उनका चिन्तन, भापा-प्रयोग व व्यवहार मित्र-अमित्र की परिधि से मुक्त था। मित्रता किसी अव्यक्त अमित्रता की प्रतिध्वनि होती है। वे इसे सुनने के आदी नही थे। यही कारण था, वे किसी सीमा से घिरे नही थे। जीवन-पर्यन्त उन्मुक्त रहे और अपने हर सांस को उन्होने समर्पण के साथ अनुस्यूत किया।

विहारीजी के शिष्यों की सख्या सैकडो-हजारो में है। उनके मित्रों की सख्या भी उससे अधिक ही है। मैंने अपने चूरू चतुर्मास (वि. सं. २०२३) में

> वे अपने पास बैठे हुये व्यक्ति को भी सचिन्त नही रहने देते थे। दो-चार क्षणों में ही वे वातावरण को स्मित हास्य में परिवर्तित कर देते थे।



संयोजन की जागरूकता

उन्हें निकट से देखा। ऐसा लगा, भूम के नागरिकों को उन्होंने अपने स्नेहिल सूत्र में इस तरह आवद्ध कर रखा है कि यह बन्धन सभी के लिये आनंद प्रद हो रहा है। साथ ही यह भी अनुभूति होती थी कि बच्चा, युवक व वृद्धा पर समान रूप से छा जाने वाला यह एक अनूठा व्यक्तित्व था। बच्चों की अमित श्रद्धा जहां उनकी ओर उमड़ती थी तो युवक भी उनके प्रति सहज समर्पित थे। बुजुर्ग उन्हें अपने परामर्शक के रूपमें मानते थे तो साथी उन्हें अपना मार्ग दर्शक। सभी वर्गों को आकर्षित करने का अनूठा जादू विहारीजी की अपनी निजी सम्पत्ति थी, उन्हें विरासत में प्राप्त नहीं हुई थी।

वे मनसा, वाचा, कर्मणा अणुव्रती थे। भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी गहरी निष्ठा थी। त्याग-परम्परा को वे जीवन के लिये अनिवार्य मानते थे। साधु-समाज को वे सजग प्रहरी के रूप में मानते हुए सदैव अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त करते थे। वे अपने को लघु मानते थे, पर जनता ने उन्हें कभी लघु नहीं माना।

बहुधा व्यक्ति अपनी असफलता को देखकर निराश हो जाता है। उसे चिंताएं घेर लेती हैं। मायूसी उनका दामन नहीं छोड़ती। परिणामतः असफलता का चीर लम्बा होता चला जाता है। व्यक्ति निराशा से ऊपर उठ कर कुछ सोच सके ऐसा वहां कुछ भी नहीं बच पाता। निराशा चिंता और मायूसी की परछाईयां मनुष्य से कोसों दूर होनी चाहिये थी, पर इस युग में उन्होंने अपने आंचल में उसे (मानव को) समेट लिया है। मानव भूल जाता है इस सूक्त को 'जिन घड़ियों में हँस सकते हैं उन घड़ियों में रोयें क्यों?' कुछ एक व्यक्ति इसके अपवाद भी होते हैं। असफलता उन्हें दबा नहीं सकती, कभी कभी विस्मृति से वह उनके अनुगत भले ही हो जाये। तब निराशा, चिन्ता और मायूसी भी उनसे रूठी हुई सी रहती है। अपनी मुस्कान से वे उसे जीत लेते हैं। पं० कुञ्जविहारी जी के चेहरे पर स्मित मुस्कान सदैव रही। व्यग्रता ने उनके पास आने का साहस नहीं किया। विहारी जी इससे आगे की कला में भी निष्णात थे। वे अपने पास बैठे हुए व्यक्ति को भी सचिंत नहीं

रहने देते थे। दो चार क्षणों में ही वे वातावरण को स्मित हास्य में परिवर्तित कर देते थे। प्रत्येक व्यक्ति उस मुस्कान में पग कर अपने दु:ख दर्द को भूल जाया करता था। विहारी जी को देख कर मुझे वह पद्य बहुधा याद आता था—

जब तुम आये जगत मे जगत हँसा तुम रोये
ऐसा काम कोई कर चलो, तुम हँस मुख जग रोये

मुस्कान अंतिम क्षण तक भी उनके साथ रही। उनके निकटस्थ व्यक्तियों ने बताया, आत्मा के प्रयाण के बाद भी उनकी पार्थिव देह विहँसती ही रही। मुस्कान का उनके साथ तादात्म्य नही होता तो यह प्रसग भी नही बन पाता।

वे मनसा, वाचा, कर्मणा अणुव्रती थे। भारतीय संस्कृति के प्रति उनकी गहरी निष्ठा थी। त्याग-परम्परा को वे जीवन के लिये अनिवार्य मानते थे। साधु समाज को वे सजग प्रहरी के रूप में मानते हुए सदैव अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त करते थे।

—मुनि श्री महेन्द्रकुमार 'प्रथम'

मिलाप भवन
जयपुर
२०-११-६८

(१४) श्री [illegible]

[illegible]



श्री आ० रामचन्द्र

आ
ज
को
हा
वो
कु
छ
?

अब कहाँ वो गूँज
अब तो सन्नाटा है
और उसकी राख बाकी है
विहारों की बहार तो उजड़ हो चुकी
सूख हुए पत्तों की बयार बाकी है।
टूट हुए दिल की पुकार बाकी है।
रो रहे हैं सभी
आज इस गम में
इस तरह से
चल बसा है भाई
जैसे कुछ न हर घर में
हर गाँव में
हर आँगन में
मर गया है कोई
घर २ का चिराग बुझ गया जैसे
जीवन का राग चुप हो गया जैसे
दीपक का तेल चुक गया जैसे

मा की वीणा का तार तो टूट ही गया
टूटे तारो को जुटाने की सजा वाकी है।
होगे फिर भी मुशायरे
कवि-सम्मेलन
जश्ने आजादी भी होगे
जुटेगे लोग
लगेगे फिर भी मेले
सास्कृतिक सध्याए फिर भी मनाई जावेंगी
'राम प्रियदर्शी' की सदारत में,
लेकिन ढूढेगे लोग
इधर औ उधर
खोई २ निगाहे भी भटकेंगी
सदर की खुद की आँखें जव तलाशेंगी
'आओ विहारीजो' कह कर किस को पुकारेंगे
कौन अव देगा दाद हमे
रो पड़ेगे जिसको भी पुकारेंगे।

× ×

जाओ विहारी जी
कुंज और वहार तो अव हमारी उजड़ ही चुकी
कांटे रह गये है पीछे
फूलों की वयार तो हमारी बिछुड ही चुकी
तुम तो चल दिये हंस कर
कह गये कि मां के मन्दिर में
फर्ज के एहसास में
वच्चों में
उनके उस्ताद का दम निकले
हमे पता ही न चला कि चुपके से
इस चमन से
चिलमन से

बहारो से
हमारे कुञ्जविहारीलाल कब निकले।
तुम तो चले ही गये लेकिन
तुम्हारे गमगीन गम व मातम मे
हमे जीने की सजा बाकी है।
विहारी की बहार तो
उजड ही चुकी
अब तो पतझड है
और उसकी राख बाकी है
टूटे हुए दिल की पुकार बाकी है।

जी० रामचन्द्र, आई ए एस, 'राम प्रियदर्शी
जिलाधीश चूरू, २८/११/६८



२ अक्टूबर १६५० ई० सर्वोदय आश्रम चूरू द्वारा आयोजित गांधी जयन्ती पर श्री एस डी पाण्डे प्रधानाचार्य लोहिया महाविद्यालय की अध्यक्षता मे श्री कुञ्जविहारीजी महात्माजी के जीवन चरित्र पर प्रकाश डाल रहे हैं।

राष्ट्रीय भावना के प्रेरक

श्री कुञ्जविहारी जी शर्मा के निधन समाचारो से विस्मय एव दुःख हुआ। मानस इस आकस्मिक घटना को सुन कर क्षुब्ध हो उठा।

मै जब जिलाधीश चूरू था, तब मुझे उनकी योग्यता, अनुभव आदि से परिचित होने का अवसर मिला। शर्मा जी वस्तुतः संस्कृत के विद्वान् थे। राष्ट्रीय सेवा, जनहित व साहित्य सेवा ही उन के प्रमुख क्षेत्र रहे। इतना ही नही शिक्षा सम्बन्धी क्षेत्र भी उनका व्यापक था, उस में विशालता थी। उनके राम-चरित मानस के ज्ञान का स्मरण आ जाने पर आज भी हृदय पुलकित हो उठता है। उनकी मधुर वाणी, ओजस्वी भाषा, और उनके सुकोमल हृदय ने मेरे हृदय पटल पर चिर स्थायी छाप छोड दी है। मुझे शर्मा जी के अति निकट सम्पर्क मे आने का अवसर विशेष कर शिक्षा सम्बन्धी चर्चा, छात्रों द्वारा खेल-कूद प्रतियोगिता एवं रगमच पर अभिनय आदि स्थलो पर मिला।

मैं उनके सुन्दर आचरण, शिक्षा के क्षेत्र में रुचि, साहित्य सेवा, बच्चों मे राष्ट्रीय भाव जागृत कराने की प्रेरणा से विशेष प्रभावित रहा हूँ।



मैंने उनके साथ सास्कृतिक शोध सस्थान नगर श्री चूरू को देखा

सितम्बर सन् १९६५ मे जब पाकिस्तान ने हिन्दुस्तान पर जो अधम हमला किया एव समय की गति का आभास करते हुए शर्मा ने जवानों की सेवा हेतु छात्रों को प्रोत्साहित एवं प्रेरित किया वह विस्मृत नही हो सकता।

मैं उनके परिवार से हार्दिक सहानुभूति प्रकट करता हू एव परमेश्वर से प्रार्थना करता हूं कि दिवगत आत्मा को शान्ति एव सद्गति प्राप्त हो।

निबन्धक— राजस्व मंडल, राजस्थान   गो० भगत

अजमेर ५-१०-६८

मैंने एक व्यक्तित्व देखा —

मैंने एक ऐसा व्यक्तित्व देखा–जिसके सम्बन्ध में अब सिर्फ पढ़ा जायेगा, और पाठक उसकी कहानी पढ़ पढ़ कर उस व्यक्ति का दर्शन करने को तरसेगा। और जमाना कहेगा– "अफसोस! वैसा व्यक्तित्व बीज आने वाली कई शताब्दियों तक इस मरु भूमि में पल्लवित होने की संभावना नहीं है।" मेरा पाठक निराश होकर भटक जायेगा।

जब भी उन्हें देखा– प्रसन्न मुख मुद्रा विहँसता हुआ चेहरा जिसमें सरलता एवं निश्छलता की सौरभ महकती फूलों हुई देखकर मुख कमल कहने को जी होता है कोई कल्पना नहीं कर सकता कि इस खिले हुए 'मुख कमल' के नीचे एक हृदय है और उसमें न जाने कितने दर्द छिपे हैं अपने नहीं धर्म समाज और देश की जनता के। आने वाली नई पीढ़ी की चिन्ताएं घुमे फँसे करोट रहा है भीतर ही भीतर। जब कभी उनकी मधुर व सुभाषित वाणी सुनने का प्रसंग आता तो, ऐसा लगता कि यह व्यक्ति स्वयं बह रहा है और हमें भी बहाए ले जा रहा है सेवा और समर्पण के महा प्रवाह में।

उनके चेहरे पर कभी कभी एक शिकन देखी कि 'हम सिर्फ अपने लिए जी रहे हैं सिर्फ अपने लिए। अपनी सन्तान के लिए भी नहीं। देश और राष्ट्र की बात बहुत दूर है।" उनकी यह पीड़ा वाणी में भी व्यक्त होती थी, एक पुकार उठती कि 'हमें अपनी इस क्षुद्रता को तोड़ना है अपने अस्तित्व को विराट बनाना है, और समर्पित हो जाना है — संस्कृति साहित्य, धर्म और समाज के अभ्युदय के लिए"।

श्री कुञ्जबिहारीजी — जिन्हें हम बिहारीजी के संक्षिप्त नाम से जानते थे भारतीय संस्कृति के एक जीवन्त रूप थे। उनमें एक पिता का सहज वात्सल्य था और भारतीय गुरु की उदार कर्तव्य निष्ठा भी। संस्कृति और साहित्य का उदात्त चिन्तन उनमें प्रस्फुटित हुआ था, और भारतीय तत्व चिन्तन की दिव्य जीवन दृष्टि भी उन्हें प्राप्त हुई।

वे पिता गुरु साहित्यकार तत्व चिंतक देशभक्त और कर्तव्यनिष्ठ आदर्श नागरिक थे।

बिहारीजी की स्मृतियाँ आज मन को उद्वेलित कर रही हैं नियति की क्रूर गति पर झुंझलाहट आ रही है कि वह ऐसे व्यक्तित्व को उठाकर क्यों ले जाती है जिसकी पूर्ति आने वाला भविष्य नहीं कर सकता। — — —

सम्पादक श्री अमर भारती
सन्मति ज्ञान पीठ, लोहामण्डी, आगरा–२"

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

बात का धनी

सन् १९५० में जब मैं बागला विद्यालय मे प्रधानाध्यापक बन कर आया तब हो से मेरा विहारीजी से परिचय हुआ।

मैं कार्यालय मे बैठा था कि एक सज्जन सफेद धोती-कुर्ता पहिने, सिर पर काली टोपी ओढे, बताशे न फूट जाए ऐसी चाल से, कुछ सकुचाते धीरे-धीरे मुस्कराते, कार्यालय मे आये। यही मेरा उनका प्रथम परिचय था। इसी परिचय मे हमने एक दूसरे को समझा व उसी दिन से मै उनका भक्त बन गया। हमारे बीच मे से आयु, पद आदि की दीवार उसी दिन से हट गई, आपस मे किसी प्रकार का भेद भाव न रहा।

हम दोनो का एक दूसरे के स्वागत सत्कार का ढग भी अलग था। विहारीजी दरवाजे पर से ही आवाज लगाते 'अलख निरजन', उत्तर मिलता—सुबह ही सुबह कहाँ का मँगता आ गया, भीड छाट, अगला दरवाजा देख! लेकिन उनके अन्दर आते ही मैं भोला बन कहता, अरे यह तो विहारीजी हैं, मैं तो समझा था कोई—।

विहारीजी कहाँ चूकते, बच्चो मे से जो दिखाई देता उसे ही आवाज लगाते—ओ भोला! जरा शीशा तो ले आ, तेरे पिताजी को जरा दानी महापुरुष का चेहरा शीशे मे दिखला दू। उत्तर में मैं भी आवाज लगाता, बाई लीला, तू शीशा ले ही आ, विहारी का मुगालता मुझे आज दूर करना है। अपने को कामदेव का अवतार ही मानता है, शीशा देखने से ही पता चलेगा कि पण्डितानी गरीब व भली औरत है, और कोई होती तो शक्ल देखते ही भाग गई होती।

इसी तरह का प्रेमालाप आम तौर पर मिलने पर होता, फिर कही एक दूसरे के दुःख सुख की बातें होती। विहारीजी के आते ही चिन्ता, दुःख, क्रोध आदि सब ही भाग जाते थे। वह स्वयं भी अनेक परेशानियो से घिरा था, परन्तु क्या मजाल कि उनकी छाया भी मुँह पर आ जाए। यह दुर्लभ गुण तो विरले ही मनुष्यों मे मिलता है।

राजकीय नौकरी से अवकाश पाने के बाद अगस्त ६७ मे मैं चूरू आया था। ओमप्रकाश बजाज के यहा ठहरा था। किसी विचार में बैठा था कि धीमी सी चिर-परिचित "अलख निरंजन" की आवाज ने चौंका दिया। देखा विहारी ही है, परन्तु पहिले वाले विहारी की छाया मात्र ही है। चेहरा पीला पड गया है, रौनक गायब है, परन्तु वह शर्मीली, आकर्षक मुस्कान अब भी चेहरे पर खेल रही है।

दशा कुछ सुधरी नहीं लगी। हमेशा के स्वागत सत्कार के बदले मैं तो भूल गया। सिर्फ इतना ही कह सका, 'बिहारी यह क्या दशा बनाली?' शायद मेरे चेहरे पर दुःख की छाया देख कर बिहारी ने कहा, 'बाबूजी, मैं तो मृत्यु के लिए अभी तैयार हूं, इसमें दुःख क्यों? मनुष्य को मरना तो है ही, परन्तु जीने की लालसा तो हर एक को लगी ही रहती है। मैं तो अब यही चाहता हूँ कि यदि एक वर्ष और जीवित रह जाऊं तो एक आध शेष कर्तव्यों को और पूरा कर दूं।' मैंने कहा पंडित तेरा कितना ही क्या है दो साल के जीवन की गारंटी तो मैं लेता हूं। परन्तु इलाज मेरे आदेशानुसार कराना पड़ेगा। बिहारी ने उत्तर दिया, ठीक है मुझे तो एक वर्ष की गारंटी की जरूरत है।

बिहारीजी को शीघ्र डा० नरहर लाल जी के पास ले गया। दशा में काफी सुधार हुआ, मुझे तो आशा थी कि मेरी गारंटी सच्ची होगी। परन्तु वह तो अपनी बात का धनी निकला एक वर्ष पूरा होते ही मुझे झूठा साबित कर चला गया। सिर्फ चला ही नहीं गया जाने से पहिले भी 'बात का धनी हूं' यह रौब भी मुझ पर गांठ कर ही गया।

मृत्यु से पांच छः दिन पहिले, "अलख निरंजन' की मधुर आवाज के साथ बिहारीजी आये अच्छे खासे दिखलाई देते थे। बैठते ही बोले, बाबूजी एक वर्ष हो गया अब मुझे यदि भगवान् बुलावें तो भी कोई गिला नहीं।" मैंने कहा पंडित, क्या बकता है? सांड जैसा तो हो गया फिर भी मरूं मरूं करता है। क्या आज पण्डितानी ने मरम्मत कर दी है जो ऐसा कहता है या मुझे झूठा साबित करना है? मैंने तो दो वर्ष की गारंटी ले रखी है अभी तो एक वर्ष ही हुआ है।

मैं तो स्वप्न में भी नहीं सोचता था कि यही अन्तिम मुलाकात होगी।

बिहारी की मृत्यु से प्रत्येक को जो उनसे जरा भी परिचित था दुःख हुआ। विद्यार्थी एक आदर्श गुरु खोकर दुखी है अध्यापक एक अच्छा सहयोगी खो कर दुखी है, इसी प्रकार हर व्यक्ति उनके किसी न किसी गुण के कारण दुखी है। दुखी मैं भी हूँ और बहुत किन्तु किसी गुण के कारण नहीं अपितु इस युग में न पाये जाने वाले इस दुर्गुण के कारण कि 'अब कौन मुझे सच्ची खोटी खरी मधुर शब्दों में सुनायेगा।'

—विश्वेश्वरदयाल गुप्ता

प्रतुल प्रिंटिंग प्रेस
चूरू।

उज्जवल आत्मा

प्रिय अमर कुञ्जविहारी,

जीवन और मरण के बाहुपाश में तुम नहीं थे, तुम स्वच्छन्द हो— तुम हमारी दृष्टि से अलग हो गये हो, लेकिन सृष्टि से नहीं। तुम इतनी जल्दी क्यों चले गये, इसका भी रहस्य है। पता नहीं, भगवान् की कितनी दुनिया और है, और तुम्हारी आत्मा शायद किसी दूसरी दुनिया की सैर कर रही हो, पर यह निश्चित है कि तुम्हारी जैसी उज्जवल आत्मा सो नहीं सकती। सतत जाग्रत रहने वाली तुम्हारी आत्मा परमात्मा के साथ खेल रही होगी।

एक युग के बाद, जब मैं अपनी मातृभूमि चूरू के दर्शन करने गया तो तुम्हारे माध्यम से मैंने निश्छल प्रेम के साथ पहला साक्षात्कार किया। तुम्हारी आंखों से दीखने वाली हँसी, तुम्हारी आत्मा से, आत्मा की तह से निकलने वाली आवाज, तुम्हारा घर में बुलाकर, "बाजरे की रोटी और फलियों का साग" खिलाने का प्यार— यार कभी भूल सकेंगे? तुम तो मेरे मित्र थे, और मेरा इतना सौभाग्य था कि मैं तुम्हारी सांसारिक मृत्यु से पहले तुमसे मिला-खिला और हिला।

लोगों ने मुझे समाचार भेजे कि तुम्हारा सांसारिक स्वरूप समाप्त हुआ, किन्तु भाई तुम अमर हो; मृत्यु का झटका तुम्हें समाप्त नहीं कर सकता। तुम्हारे कहकहे, तुम्हारी हँसी, तुम्हारी आत्मीयता, तुम्हारी भावुकता चूरू के कण-कण में गूंजती रहेगी।

तुम चूरू के मुकुट हो। चूरू का हर नागरिक यदि तुम्हारे जसे जीवन का अनुसरण करे तो चूरू धरती पर स्वर्ग बन जाये। भगवान् की यह इच्छा है कि तुम्हारे मधुर-मनोहर और मंजुल स्वरूप का सन्देश पश्चिमी हवाओं में गूंजता रहेगा और तुम्हारी बनाई हुई सड़क से चूरू का हर नागरिक सफलता से गुजरता रहेगा।

तुम्हारा जीवन सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् से ओत-प्रोत था। तुम महान् आत्मा की सुगन्धी छोड़ कर गये हो, हम सुवासित हो रहे हैं और होते रहेंगे।

४-११-६८
भरत भवन
न्यू जूहू रोड,
बम्बई-५६

सस्नेह
भरत व्यास

अनमोल रत्न

श्री कुञ्जविहारीलाल मेरे अत्यन्त निकटस्थ प्रिय जनों में से एक थे। मैं उनकी विद्वता पर मुग्ध था। वे शिक्षा विभाग के एक अनमोल रत्न थे जिन्हें खो कर बड़ी क्षति हुई है। उनका स्थान सदैव रिक्त हो रहेगा।

गत वर्ष से वे लगातार अस्वस्थ रहे किन्तु वे निरन्तर रूप से छात्रों की प्रगति में व्यस्त रहते थे। छात्रों के नैतिक स्तर को उच्च करने में वे बहुत ही चिन्तित रहते थे।

मैं व्यक्तिगत रूप से उन्हें अधिक चाहता था क्या कि वे एक उत्तम कोटि के अध्यापक थे। हिन्दी अध्यापन में कुशलहस्त होने के कारण सभी छात्र उनसे लाभान्वित होते थे और यह विद्यालय का सौभाग्य था कि ऐसे उत्कृष्ट व्यक्ति बागला विद्यालय में थे।

कृपया मेरी ओर से उनके कुटुम्ब को समवेदना संदेश दें। ईश्वर से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को पूर्ण शान्ति मिले। मेरे समस्त परिवार ने उनके निधन पर समवेदना अभिव्यक्त की है। ईश्वर उन्हें सद्गति दे।

दि० २७-६-६८

राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय
नागौर

बालूसिंह सोलंकी

प्रभावशाली व्यक्तित्व



श्री कुञ्जबिहारीजी से मेरा प्रथम परिचय सन् १९४१ ई० में चूरू में ही कुछेक हास्यात्मक कविता पंक्तियों के आदान प्रदान से ही हुआ था। परिचय बढ़ कर मैत्री में परिणित हो गया।

स्मित हास्य युक्त प्रभाव शाली व्यक्तित्व, बच्चों के बीच बच्चे और बड़ों के बीच बड़े और साहित्य रसिकों के बीच— मैं क्या कहूं— काव्य हृदय थे।

उनके अध्यापन को तो छात्र श्रद्धा पूर्वक स्मरण करेंगे। दैव संयोगवश वे तो अनेक छात्रों को उनका शिष्य कहलाने का गौरव दे गये।

इस युग में उन जैसे कर्मठ व्यक्ति की देश और समाज को अव्यक्त उन्नति के लिये बड़ी आवश्यकता थी।

सुजानगढ़

उमानीराम शर्मा "आत्रेय"

जीवन मे अनेक अपरिचितों से परिचय होता है, कई व्यक्तियो के साथ निकटता का सम्बन्ध भी बनता है, किन्तु पूर्व जन्म के परिचय का आभास विरले ही जनों से मिलता है। सरकारी सेवा मे एक स्थान से दूसरे स्थान, एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय मे विचरण करते हुए विविध व्यक्तित्वों से सम्पर्क हुआ। सान्निध्यकाल मे सम्भवत: उनका प्रभाव भी रहा, किन्तु विलगता के साथ ही चित्रपट की छाया की तरह उनको स्मृति विस्मृति के गर्भ में सो गई।

चूरू जैसी अनजान जगह मे अनिच्छुक-सा, जब स्थानान्तरित होकर आया, तो विद्यालय प्रांगण मे खडे लम्बे कद, सुदृढ देहयष्ठि, आजानुभुज वाले जिस व्यक्ति ने अपनी स्वाभाविक स्मितधारा से मेरी दृष्टि प्रक्षालित की, उसकी वह स्मृति आज भी मानस पटल पर ज्यो की त्यों खचित है।

ज्योति-पुञ्ज

विद्यालय मे उनकी नियमितता, अपने कार्य के प्रति पूर्ण श्रद्धा, कर्मठता एव सस्था के हित के प्रति जागरूकता ने मुझे मोह लिया। अस्वस्थ होते हुए भी उनको कभी विलम्ब से आते मैंने नही देखा। कक्षा में अध्यापन के कालाँश मे उन्होंने कभी सुस्ती अथवा थकान की प्रतीति नही होने दी। दूसरो के कार्यो को ही नही, अपितु सस्था के अतिरिक्त कार्यों को उन्होने पूर्ण जिम्मेदारी से किया। सस्था के विवादास्पद विषयों मे जब मुझे मार्ग की आवश्यकता महसूस हुई, उन्होने मुस्कुराते हुए ऐसी सलाह दी, जिसने केवल मार्ग ही प्रशस्त नही किया, बल्कि मुझे कार्य करते रहने की प्रेरणा दी। एक सच्चे शिक्षक, एक आदि गुरु के व्यक्तित्व की स्पष्ट प्रतिमूर्ति, मैंने उन्हे पाया। छात्रो पर जितना प्रभाव उनका मैने देखा, वह किसी भी विद्यालय मे आज तक देखने को नही मिला। छात्रों में भी उनके प्रति अपार श्रद्धा थी।

पन्द्रह अगस्त के सास्कृतिक कार्यक्रम की आर्थिक विपन्नता से जब घिरे हुए, मैने अपनी समस्या उनके समक्ष प्रस्तुत की, तो हँसते हुए उन्होने मुझे निर्भय कर दिया और दो चार श्रेष्ठिजनो से ही मेरी इस समस्या का सूत्र खोज निकाला। सास्कृतिक कार्यक्रम का संयोजन करते हुए, उनकी वाक्पटुता, सयोजन सामर्थ्य एव रङ्गमञ्च नियन्त्रण की अपूर्व क्षमता, शब्दों मे सजोया-चित्रात्मक प्रस्तुतिकरण, मैने उससे पूर्व कभी नही देखा!

किन्तु सतजनों का सम्पर्क अल्प होता है, यह विधना की विडम्बना है। अध्यापकों मे बैठकर उनके सारगर्भित चुटकुले, कथात्मक प्रसङ्ग सुनते हुए, अगस्त व्यतीत हो गया। सभी अध्यापकों एवं मुझे उनके स्वास्थ्य के

प्रति चिंता थी, उनसे अनेक बार कहा– 'आप विश्राम किया करें।' किन्तु उनका उत्तर था– "साहब मेरी आत्मा है, कक्षा में पढ़ाते हुये चला जाऊं।" मधुमेह ने उन्हें जर्जर कर दिया था। सितम्बर अठारह को कक्षा दसवीं 'द' में पढ़ाते हुए, उन्हें कुछ घबराहट महसूस हुई वे कक्षा से कार्यालय तक आये और मूर्च्छित हो गये। डा० रमेश सिंघवी आये उपचार हुआ और सभी अध्यापक एवं छात्र उन्हें घेर कर खड़े हो गये मन में अपार आकुलता लिये, नयनों में विषाद लिये। उस दिन उन्होंने चेतन लाभ किया। हमारे मुख की उदासी देखकर उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा– 'साहब देखिए, मेरा यह गेम कैसा रहा आप सब परेशान हो गये।' हम लोगों के मुखों पर भी मुस्कराहट आ गई। १९ सितम्बर को वे अपने घर पर रहे, शाम मिले तो अगले दिन तक स्कूल आ जाने की बात उन्होंने कही।

किन्तु विधना कुछ और चाहती थी। २० सितम्बर को प्रातः शाला में शोक समाचार पहुंच गया। विद्यालय के बालक, अध्यापक, चपरासी सब रो पड़े। मैं अपने आप को सम्भाल नहीं पा रहा था। लग रहा था जैसे अंतराल का कोई अनमोल रत्न खो गया है कोई ज्योति पुञ्ज बुझ गया है। क्या करूं? मेरा दायित्व क्या है? यह समझ भी जैसे तिरोहित हो गई।

विद्यार्थी बिना कहे उनके घर की तरफ दौड़ पड़े शिक्षकगण भी



अन्तिम दर्शन
विहारीजी की शान्त देह के पास श्री गिरजाशंकर श्री रामानन्द गुप्ता पीछे दोनों सुपुत्र श्री दामोदर और श्याम



महा यात्रा
शहर के गणमान्य नागरिक छात्र शिक्षक और प्रियजन श्री कुञ्जविहारीजी की महा यात्रा में

आर्द्र नयन लिये, अनुशासन की वेड़ियां तोड़ उनके अंतिम दर्शन की साध लिए चल पडे, तब मैं उद्वेलित होकर अपने कार्यालय मे घुस गया और बच्चों की तरह रो पडा, किन्तु कुछ ही क्षणों पश्चात् शाला के वरिष्ठाध्यापक श्री रामकुमारजी व शिवभगवानजी आ गये!

विहारीजी उसी मधुर मुस्कान एवम् स्निग्ध भाव से अन्तिम शय्या पर सोये थे, चूरू के जनसाधारण, श्रेष्ठिजनों, बालक-बालिकाओं का तांता लगा था, एक ओर बैठा मैं सम्मान की अमूल्य निधि समेट रहा था, जो विहारीजी के चतुर्दिक विकिरण थी। मैंने अपने जीवन में किसी राजा अथवा अपार सम्पत्तिशाली सेठ को भी इतना सम्मान पाते नही देखा था। यह निर्लेप, निस्पृह, साधारण पारिवारिक स्थिति का व्यक्ति कितना ऊंचा है! कितना महान है! जो मेरे सान्निध्य में रहा है। मेरा वक्ष गर्व से आप्लावित हो गया।

आज विहारीजी हमारे बीच नहीं है किन्तु उनकी स्मृति एक ज्योति शलाका सी विद्यालय के प्राङ्गण में जल रही है, ज्ञान कक्ष - और विहारी कुञ्ज का निर्माण हो रहा है, जो युगो युगों तक समाज का मार्ग प्रशस्त करेगा।

दि० १८/७/६६ — रामानन्द गुप्ता :
रा० बागला उ०मा० विद्यालय, चूरू। — प्रधानाध्यापक

श्री कुञ्जविहारी शर्मा स्मृति ज्ञान-कक्ष के शिलान्यास पर



दाईं ओर से— प्रधानाध्यापक श्री रामानन्दजी गुप्ता, श्री सोहनलालजी हीरावत और पं. विद्याधरजी शास्त्री

उनकी देन अद्‌भुत थी

कितने सरल,मधुर और स्वस्थ सहजता के धनी थे प० श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा । नगर में होने वाले आयोजनों में विहारीजी ने जो देन दी, वह सचमुच अद्‌भुत थी । महिला अणुव्रत समिति चूरू की बहिनें उनके सतत और सद् प्रयत्नों के फल स्वरूप ही अपनी सुप्त और मूक भावनाओं को वाणी दे कर उन्हें श्रद्धेय साधु समाज के सान्निध्य में होने वाले आयोजनों में काव्य और साहित्य के रूप में प्रस्तुत कर पाने में सक्षम बन सकी ।

वे जब से भारत के महान् संत आचार्य श्री तुलसी के सम्पर्क में आये, उन्होने साधु जीवन और अणुव्रत व्यवस्था को बहुत नजदीक से परखा । एक सच्ची निष्ठा और लगन के साथ अणुव्रत के नैतिक अभियान के प्रचार कार्य में वे जीवन के अंतिम समय तक जुटे रहे ।

महिला अणुव्रत समिति
चूरू
दिनांक २१ ११ ६८

अमराव देवी बाँठिया

जो अब नही रहे

जिस चुनौती का कोई जवाब नही वह उन्हे दिनांक २० सितम्बर ६८ को सदा के लिये ले गई । कितने सरल मधुर और स्वस्थ सहजता के धनी थे प० श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा । हम उन्हे भुला नही सकते । जन्म लेना और चले जाना दुनिया का शाश्वत नियम है लेकिन घटना वह विशेष दुःखद होती है जब जाने वाले का रिक्त स्थान पूर्ति होता दिखाई नही देता । वे जब से भारत के महान् संत आचार्य श्री तुलसी के सम्पर्क में आये उन्होने साधु जीवन और अणुव्रत व्यवस्था को बहुत नजदीक से परखा । एक सच्ची निष्ठा और लगन के साथ नैतिक अभियान के प्रचार कार्य मे वे जीवन के अंतिम समय तक जुटे रहे । महान् साहित्यकार स्व० विहारीजी की मधुर याद चूरू वासियो के दिलो मे सर्वदा अमर रहेगी । हम हृदय से अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं ।

मन्त्री
श्री जैन श्वेताम्बर
तेरा पंथी सभा
चूरू

—डूंगरमल कोठारी

सच्चे हितैषी एवं पथ प्रदर्शक

श्री विहारीजी के असामयिक स्वर्गवाससे मैं स्तब्ध होगया। समाचार पढते ही उनका मन्द मुस्कान वाला चेहरा सामने आ गया और ऐसा प्रतीत होने लगा मानो यह समाचार गलत है। दिल को यकीन नही हुआ कि वास्तव में कुञ्जविहारीजी चले गये है। विहारीजी साहित्य के सितारे थे, उन का साहित्य प्रेम अमर है। वे छात्रों के शिक्षक ही नही थे, वल्कि उनके सच्चे हितैषी एव पथ प्रदर्शक थे। छात्रो की भी उनके प्रति असीम श्रद्धा थी।

उन के निधन से चूरू नगर ही नही वल्कि समस्त क्षेत्र की जो हानि हुई है, वह कभी भी पूरी नही हो पायेगी। विहारीजी छात्रों के तारे, मित्रों के प्यारे एव वरिष्ट नागरिको के दुलारे थे और अब उनके न रहने से प्रत्येक वर्ग एक असहय दुःख में डूब गया है। जो आता है, वह अवश्य जता है। परन्तु अपने समय पर जाय तो इतना दुःख नही होता। मानसिक अशान्ति ने अव्यवस्था सी पैदा करदी है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि दिवगन्त आत्मा को शान्ति प्रदान करें—

गवर्नमेन्ट कॉलेज
अजमेर
२८-६-६८

डी० एस० यादव
एम. कॉम, पी. एच.डी;

हा हंत....

हाहंत सुर कुंजविहारी शर्मन्
हित्वाप्रियान् पुत्रकलत्रमित्रान्
नैतादृशोसंतविनीतदृष्टः
द्युलोकयात्तोइतिशोचकूर्मः ॥

चूरू
२२-६-६६

पं० बैजनाथ सहल

उनकी देन अद्भुत थी

कितने सरल,मधुर और स्वस्थ सहजता के धनी थे प० श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा । नगर में होने वाले आयोजनो में विहारीजी ने जो देन दी, वह सचमुच अद्भुत थी । महिला अणुव्रत समिति चूरू की बहिनें उनके सतत और सद् प्रयत्नों के फल स्वरूप ही अपनी सुप्त और मूक भावनाओं को वाणी दे कर उन्हे श्रद्धय साधु समाज के सान्निध्य मे होने वाले आयोजनो में काव्य और साहित्य के रूप में प्रस्तुत कर पाने में सफल बन सकी ।

वे जब से भारत के महान् सत आचार्य श्री तुलसी के सम्पर्क में आये, उन्होने साधु जीवन और अणुव्रत व्यवस्था को बहुत नजदीक से परखा । एक सच्ची निष्ठा और लगन के साथ अणुव्रत के नैतिक अभियान के प्रचार काय में वे जीवन के अतिम समय तक जुटे रहे ।

महिला अणुव्रत समिति
चूरू
दिनाक २१ ११ ६८

अमराव देवी बाँठिया

जो अब नही रहे

जिस चुनौती का कोई जवाब नही वह उन्हे दिनाक २० सितम्बर ६८ को सदा के लिये ले गई । कितने सरल मधुर और स्वस्थ सहजता के धनी थे प० श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा । हम उन्हे भुला नही सकते । जन्म लेना और चले जाना दुनिया का शाश्वत नियम है लेकिन घटना वह विशेष दुखद होती है जब जाने वाले का रिक्त स्थान पूर्ति होता दिखाई नही देता । वे जब से भारत के महान् सत आचाय श्री तुलसी के सम्पक में आये उन्होने साधु जीवन और अणुव्रत व्यवस्था को बहुत नजदीक से परखा । एक सच्ची निष्ठा और लगन के साथ नैतिक अभियान के प्रचार काय मे वे जीवन के अतिम समय तक जुटे रहे । महान् साहित्यकार स्व० विहारीजी को मधुर याद चूरू वासियो के दिलो मे सवदा अमर रहेगी । हम हृदय से अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं ।

मत्री
श्री जन श्वेताम्बर
तेरा पथी सभा
चूरू

—डूगरमल कोठारी

सच्चे हितैषी एवं पथ प्रदर्शक

श्री विहारीजी के असामयिक स्वर्गवाससे मैं स्तब्ध होगया। समाचार पढते ही उनका मन्द मुस्कान वाला चेहरा सामने आ गया और ऐसा प्रतीत होने लगा मानो यह समाचार गलत है। दिल को यकीन नही हुआ कि वास्तव में कुञ्जविहारीजी चले गये है। विहारीजी साहित्य के सितारे थे, उन का साहित्य प्रेम अमर है। वे छात्रों के शिक्षक ही नहीं थे, वलिक उनके सच्चे हितैषी एव पथ प्रदर्शक थे। छात्रो की भी उनके प्रति असीम श्रद्धा थी।

उन के निधन से चूरू नगर ही नही बल्कि समस्त क्षेत्र की जो हानि हुई है, वह कभी भी पूरी नही हो पायेगी। विहारीजी छात्रों के तारे, मित्रों के प्यारे एव वरिष्ट नागरिकों के दुलारे थे और अब उनके न रहने से प्रत्येक वर्ग एक असह्य दुःख मे डूब गया है। जो आता है, वह अवश्य जता है। परन्तु अपने समय पर जाय तो इतना दुःख नहीं होता। मानसिक अशान्ति ने अव्यवस्था सी पैदा करदी है। ईश्वर से यही प्रार्थना है कि दिवगन्त आत्मा को शान्ति प्रदान करे—

गवर्नमेन्ट कॉलेज
अजमेर
२८-९-६८

डी० एस० यादव
एम. कॉम, पी. एच.डी;

हा हंत....

हाहंत सुर कुंजविहारी शर्मन्
हित्वाप्रियान् पुत्रकलत्रमित्रान्
नैतादृशोसंतविनीतदृष्टः
द्युलोकयात्तोइतिशोचकूर्मः ॥

चूरू
२२-९-६९

पं० बैजनाथ सहल

चिंतनशील विचारक एवं तार्किक

खासोली का वह संत अध्यापक तप और त्याग की साक्षात् मूर्ति था। वस्तुत वह रस सिद्ध व्यक्ति था जिसके यश शरीर को जरा और मरण का कोई भय नही है। कभी कभी सोचता हूँ कि वह योग भ्रष्ट व्यक्ति था शापित यक्ष था, जिसे धरा पर किंचित समय के लिये अवतीर्ण होने के लिये बाधित किया गया था और कवि ग्रे (Gray) ने अपनी कविता 'एलिजी' (Elegy) मे सागर की अथाह गहराइयो मे पडे बहुत से बहुमूल्य रत्नो एव वनो मे अनदेखे खिल कर मुरझा जाने वाले फूलो का जिक किया है। परिस्थितिया साथ नही देतीं इस लिये रत्नो का कीमतीपन और फूलो का खिलना बेकार हो जाता है। खेद है कि सदियो से अध्यापक के मान सम्मान के प्रति उदासीन समाज रूपी सागर और वन मे हमारा वह चमकता रत्न और विकसित फूल सही रूप मे प्रकाश में नही आ सका।

तथापि कुंज विहारी एक आदर्श अध्यापक के रूप मे अपना स्थान बनाये रहेगा। निरन्तर ज्ञानार्जन और निरंतर ज्ञान वितरण ही उसके जीवन का ध्येय था। उस व्यक्ति ने अध्यापक जाति को सदा के लिये गौरवान्वित किया है तथा आने वाली पीढियो के लिये प्रकाश स्तंभ का काम करता रहेगा। उस कर्म योगी के कार्यों का मूल्यांकन कर पाना कठिन है।

विहारी आडम्बरो एव दिखावो से सदा दूर रहा। वह आडम्बरो एव दिखावो से कभी समझौता करके नही चल सका। वह एक चिंतन शील विचारक एव तार्किक था जिसने अपने जीवन में रूढियो तथा समाज की सडी गली परम्पराओ से सदा लोहा लिया और एक स्वस्थ समाज के निर्माण की दशा मे निरंतर चेष्टा की। उसके आचरण की यह एक मूक सभ्यता बडी बलवती थी और उसके परिचितो पर इसका बडा भारी प्रभाव था। शिष्यो साथियों तथा जनता के हजारो लाखो ने अश्रु सिक्त नेत्रो से उसे जो अंतिम विदाई दी, मरणोत्तर सम्मान प्रदान किया, वह इस बात का पुष्ट प्रमाण था कि लोगों पर उसके सादे रहन सहन एव ऊंचे विचारो की गहरी छाप थी। वास्तव मे ऐसे सम्मान के अधिकारी बहुत कम लोग होते हैं।

मजलिसो एव महफिलो को सूनी बना कर चला गया वह। वह इतना सजीव व्यक्ति था कि जहाँ भी वह उपस्थित हो गया हँसी के फव्वारे फूट पडते थे। भाई गोविंदजी अग्रवाल ने बातचीत के दौरान बडे मार्मिक शब्दों में कहा सम्मत ही खतम हो गई। जिला धीश महोदय ने भी नगर श्री में होने वाली शोक सभा में इस जन में उसकी क्षति को अपूरणीय बताया था।

पिछले छः सात वर्ष से उस मित्र के साथ प्रातः सायं बीड में सह-भ्रमण का सौभाग्य मुझे मिला था। राजनैतिक, सामाजिक एव आध्यात्मिक विषयों पर बडी उपयोगी वार्ताए होती थी। गाधी नेहरू के प्रति पूर्ण आस्थावान वह महामना कॉंग्रेस के ह्रास एव देश व्यापी भ्रष्टाचार से चिंतित था। उसकी प्रबल आकांक्षा थी देश को भ्रष्टाचार मुक्त एवं सबल देखने को। पिछले दो वर्षो में वह कुछ टूटा हुआ सा, बुझा हुआ सा एव परिश्रान्त सा लगता था। जल्दी जाने की बात भी कभी-कभी कर बैठता था। आज व्यर्थ मैं उन टीलो पर, झाड़ियों के नीचे, फोगों के पास तथा नीमों के पार्श्व मे खोजता हूँ उसे। कभी-कभी ध्यान मग्न हुआ प्रतीक्षा मे उन स्थानों पर देर तक बैठा रह जाता हूँ।

इन्द्रचन्द्र शर्मा
एम. ए, बी. एड.,

आदर्श अध्यापक

अनभ्र वज्र पात की तरह आपके पत्र से श्री कुञ्जविहारीजी शर्मा के आकस्मिक निधन का दुःखद समाचार सुन कर न केवल शोकाकुलता ही हुई, अपितु श्री शर्माजी जैसे आदर्श अध्यापक एवं वरिष्ठ साहित्यकार के चले जाने से नगर को होने वाली क्षति का चिन्तन कर मर्मान्तिक पीड़ानुभूति भी हुई।

कुञ्जविहारीजी मेरे बचपन के निकटतम स्कूल मित्र रहे थे। उनके स्वभाव में जहाँ सरलता निश्छलता एवं शुचिता थी, वहाँ व्यवहार में मृदुता परिहास तथा स्नेहास्पद भावना का दर्शन होता था।

जीवन के मध्य शिखर पर आरूढ होते ही उन्होने चूरू नगर के जीवन मे अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया था। वे शिक्षा जगत के प्राण थे तथा छात्रों के परम प्रिय अध्यापक थे। यही कारण था कि जिसने एक बार उन से भेंट करली, जीवन में उन्हे कभी भुला नहीं पाया। निश्चय ही उनका वियोग हम सब के लिये असह्य है। उनकी स्मृति में जो कुछ भी किया जायेगा, वह उनका नही, अपितु उनके माध्यम से आदर्श शिक्षक तथा शिक्षा का सम्मान होगा।

संस्करण कोठारी

"चन्द्र-ग्रहण"

शरद् पूर्णिमा का दिन। कितना सुहावना। कितना प्रेरणाप्रद। माँ सरस्वती के विलास का दिन।

देखा तो चन्द्र कुछ उदास सा नजर आ रहा है। नहीं म्लान क्या? सुउज्वल चेहरे पर यह कालिमा क्यों? ज्योत्सना विलीन होने लगी। एकाएक याद आया "चन्द्रग्रहण"।

मन में म्लानता आयी। क्रोध और घृणा के भाव प्रस्फुटित होने लगे। यह है नियति का क्रूर विधान। क्या इस नवविधान में परिवर्तन नहीं किया जा सकता? नहीं। लक्षाब्दियों से यही क्रम चलता आया है।

आत्मा ने मुझे समझाया कि तुम एक आकाश के चन्द्र को देखकर अशान्त तथा विगलित से हो रहे हो पर इस धरा पर न जाने कितने सूर्य और चन्द्र उगे, चमके और अस्तास्त हो गये। कौन रोता है? कौन किसको याद रखता है?

भीतर एक हलचल सी मच गई। जैसे हमारा कुछ खो गया। कौन खो गया? क्या खो गया? कैसे खो गया? प्रश्न पर प्रश्न। उत्तर कौन दे? आत्मा मन और शरीर स्तब्ध हो गये।

स्तब्धीकरण अधिक देर न चल सका। भयंकर विस्फोट हुआ। शरीर का रोम रो रहा था। प्रत्येक रोम रोम से जलपात हो रहा था। तभी मेरी प्रवृत्ति अन्तमुखी हो गई।

एक उज्ज्वल परिधान पहने आत्मा प्रकट हुई मुझ से बोली क्या तुम रोते हो? रोना तो कायरों का काम है। मैं मरा नहीं हूं। तो क्या आप जीवित हैं?

हां मैं जीवित हूं क्या कालिदास और तुलसीदास मर गये? नहीं।

तब फिर मैं कैसे मर सकता हूं। जब तक विद्या और साहित्य ज्योति जगती रहेगी, तब तक मैं अमर रहूँगा। चूरू से यह ज्योति जिस दिन बुझ जायेगी, उसी दिन मुझे मरा समझना।

'फिर दर्शन कब होंगे?' मैंने डरते डरते पूछा।

दर्शन? चूरू के प्रत्येक छात्र में मेरा दर्शन कर सकते हो।

मैं प्रकृतिस्थ हुआ। वाह्य संसार का ज्ञान हो गया। चन्द्र शुद्ध हो गया था। मन भी शुद्ध हो गया।

गिरिधर चोटिया

आचार्य साहित्य रत्न, प्रभाकर
अध्यापक, बागला उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
चूरू, १० १० ६८

निर्मल आत्मा

श्री कुञ्जविहारीजी के निधन का दु:खद और आकस्मिक समाचार सुन कर सहसा विश्वास नही हुआ। कभी ऐसी कल्पना भी न की थी कि इतना अटूट स्नेह रहते हुए वे यो विना मिले ही अचानक स्वर्गारोहण कर जायेंगे। मेरा दुर्भाग्य है कि मैंने एक चरित्रवान् सच्चा साथी खो दिया। आज करीब २५ साल से ऊपर हो चुके जव किन्ही पूर्व जन्म के सस्कारों से मास्टर साहव से हमारा सम्पर्क जुड़ा था। इतने लम्बे अर्से में मैंने कभी भी उनमें अहं भाव नहीं देखा और उनके सान्निध्य से मुझे हर जगह जो सम्मान मिला, उसे मैं जीवन भर नही भुला सकता। उनमे सदैव अच्छी शिक्षा और अच्छी राय ही मिलती थी और हमारे लिये उन्होने जीवन में कितना कुछ किया वह सदैव स्मरणीय रहेगा।

अपनी विद्वत्ता, सादगी और धार्मिक सहिष्णुता के कारण वे हमारे परमाराध्य आचार्य श्री एव अन्य सन्तों की सेवा का लाभ लूट सके। अपनी भाषण शैली से वे सबका मन हर लेते थे। उन की योग्यता और विद्वत्ता का साक्षात् परिचय हमारे सामने जीवन भर नही भुलाने वाली मुनि श्री चंदनमल जी महाराज की रचनाओं का सग्रह "मलयज की महक" और उसी पुस्तक में लिखी गई उनकी भूमिका है, जिसके अमृतमय वाक्यों ने हर पाठक का मन मोह लिया और जो आज भी हृदय पर छाये हुए हैं। आपके उर्वर मस्तिष्क के कठिन परिश्रम से निर्मित अनुव्रत चित्रावली के करीव ६० चित्रों का दुर्लभ सग्रह हमारी अमूल्य निधि है। उनकी विद्वत्ता भरे न जाने कितने पत्र मेरे पास सुरक्षित हैं जिनको वार-वार पढने पर भी जी नही भरता।

हमारे परिवार और हमारे सगे-सम्वन्धियो से उनका कितना गहरा स्नेह था?

परमात्मा उन्हे सुख और शान्ति दे। मेरी तो निरंतर यही कामना रहेगी।

—मंगलचन्द सेठिया

सेठिया हाउस
१, विवेकानन्द रोड,
कलकत्ता।
दि० ३-१०-६८

कर्त्तव्य और ममत्व के मिश्रण

कुछ समय से चलती आ रही कष्ट साध्य रुग्णता अने ही उस महा मानव के जीवन के प्रति कुछ आशङ्का उत्पन्न करने लगी थी किन्तु फिर भी यह अनचाहा आघात सहन करने की घड़ी इतनी शीघ्र उपस्थित हो जावेगी ऐसी कल्पना नही की थी। विधि की विडम्बना का यह दुःखद सवाद जब बम्बई मे मिला तो मन को बडा आघात लगा किन्तु आत्मा ने कहा "देवात्मा अपना कर्त्तव्य पूरा करके ब्रह्म में विलीन हो गई। अब शोक से क्या लाभ?"

अतीत की स्मृतियां हौले हौले सजीव होने लगी। बात उन दिनो की है जब मैं पाचवी या छठी कक्षा में पढता था सन्त की भांति पूज्य पण्डितजी हम सब भाइयों को घर पर स्वाध्याय कराने हेतु आये हुए थे। मा ने मेरी कोई शिकायत पण्डितजी को लिख भेजी इस पर उन्होने (पहली और अन्तिम बार) मुझे डाटा एक दो चाटे भी जड दिये और फिर माफी मागने के लिए मां के पास भेजा। लेकिन मैं जब मा से क्षमा याचना करके लौटा तो पण्डितजी स्वय अश्रुपूरित नेत्र लिये बैठे थे। अपने पास बिठला कर उन्होने प्रेम से मेरे आसू पोछे और खुद कई देर तक द्रवित होते रहे।

अब भी बम्बई या और कहीं बाहर से लौटकर आने पर जब प्रणमन के लिए जाता तो इससे पूर्व कि मैं उन्हें प्रणाम करू, उनका वरद हस्त उठ जाता और ऐसा लगता मानो वे सहज मुस्कान मे प्रस्फुटित अपना आंतरिक स्नेह मुझ पर उडल रहे हो। ऐसे थे महामना पण्डितजी जिनके प्यार और ममत्व के अनेक प्रसङ्गो से हम चारा भाइयो का जीवन भरा पड़ा है कहना चाहिए कि हम चारो भाइयो से शुरु होने वाली पीढी के लिए तो वे वरदान-स्वरूप ही थे।

सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के पर्याय रूप पण्डितजी अपने अनुपम आदर्शों का कुञ्ज लगाकर उसमे हम सभी को विहार करने के लिए छोडकर चल गये हैं और यह कुञ्ज विहार चिरकाल तक तृप्ति प्रदान करता रहेगा। उनके आदर्शों का अंश मात्र भी अगर अपने जीवन मे उतार सका तो अपने आपको कृतकृत्य समझूंगा और यही उनके प्रति मेरी सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

चूरू, ७ ५-६६ —फतेहचद भोमसरिया

कर्मठ सेनानी

२० सितम्वर १९६८ की वह मनहूस दो पहर, जव मृत्यु के अदृश्य क्रूर हाथों द्वारा नगर की एक सौम्य मूर्ति चूर्ण हो गई, लहलहाते उपवन का वह सौरभ विखेरता पुष्प, अकाल में ही एकाएक सूख कर डंठल से टूट पड़ा, हमेशा दुःख के साथ याद की जायेगी।

'विहारीजी' के आकस्मिक व असामयिक निधन से सारा समाज हतप्रभ हो उठा, ठगा सा रह गया। हर तरफ से यही ध्वनि प्रतिध्वनित हो रही थी कि 'खो गया', 'खो गया'। वास्तव में नागरिकों ने एक सुयोग्य नागरिक, समाज ने एक पथ-प्रदर्शक, साहित्यिकों ने एक मूक साहित्य सेवी, साथियों ने एक विश्वसनीय साथी एवं छात्रों ने एक आदर्श गुरु खो दिया।

सभी उनके सरल, सात्विक एवं आदर्शोन्मुख जीवन से प्रभावित थे। उनका सारा जीवन त्याग, साहित्य आराधना व शिक्षा प्रसार में ही बीता। उन्होने शिक्षा, साहित्य व समाज से सम्वन्धित अनेक विषम प्रश्नों पर एक मौलिक दृष्टिकोण ही प्रस्तुत नही किया अपितु क्रियात्मक परम्परा के अनुरूप इन सवको अपने जीवन मे उतारा भी। आत्म विज्ञापन व वाह्य प्रदर्शन से कोसों दूर रहने वाले, दोषों में भी गुण ढूंढने वाले उस जन्मजात शिक्षक में एक ऐसा आकर्षण था कि उसके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति उसका अपना वन जाता था व उसके व्यक्तित्व की एक अमिट छाप उसपर पड़ जाती थी।

यद्यपि उनका शरीर जर्जर होता जा रहा था परन्तु आत्मा युवा थी। वे जव तक जिये शान से जिये। सघर्ष के समय में भी वे धीर, वीर योद्धा की तरह दिखाई पड़ते थे। यहां तक कि उन्होंने सर्वग्रासिनी क्रूर मृत्यु का भी मुस्कराते हुए स्वागत किया। मृत्यु की भयानकता भी उनको भयभीत नही कर सकी, वे उसको, जव तक उनकी पार्थिव देह धरती मां मे एक रूप नहीं करदी गई, खुले नेत्रों से निहारते रहे।

उस महावट की छांह तले पता नही कितनों ने आश्रय पाया—फूले व फले। उसके अचानक भूमिसात होने पर कितनी क्षति हुई इसका अनुमान तो केवल भुक्तभोगी ही लगा सकते हैं। वह चला गया, सदा-सर्वदा के लिए चला गया। अगर कुछ शेष रहा तो उसके चिर वियोग पर आहें तथा आंसू।

मैं उस गो लोक वासी साथी को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ पर जिस वेल को उन्होंने अपने जीवन काल में वोया, पाला और सींचा उसको फूलित, फलित करना ही उनके प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

—वासुदेव अग्रवाल

धीर गंभीर और सहिष्णु

स्वर्गीय श्री पं० कुञ्जबिहारीलालजी लगभग [illegible] एक वर्ष से मेरे सम्पर्क में आये तथा एक रोगी के रूप में। सभी जानते हैं कि रोगी कितना अधीर और असहिष्णु होता है किन्तु कुञ्जबिहारीजी इसके सर्वथा विपरीत थे। शरीर में असह्य पीड़ा के होते हुए भी वे हँसते हुए, मुस्कराते हुए आते और अपनी पीड़ा को सर्वथा सामान्य ही बताते हुए बात करते। कभी मैं रोगियों में व्यस्त होता तो अपनी आकृति पर क्रोध या असहिष्णुता का कोई भी विकार लाए बिना अथक धैर्य के साथ मुझ से परामर्श लेने की प्रतीक्षा करते। चिकित्सक के पास ऐसा रोगी आवे जो धीर गंभीर और सहिष्णु हो तो चिकित्सक का मनोबल बढ़ता है।

मेरी चिकित्सा से उन्हें कितना लाभ हुआ होगा यह तो वे ही जानते होंगे, किन्तु एक वर्ष के सम्पर्क में वे मेरे पारिवारिक आत्मीय जन बन गये थे। उन में मैंने एक आदर्श अध्यापक को पाया जिनका अनुकरण विद्यार्थी निर्भय हो, कर सकते हैं। उनमें एक चुम्बकीय शक्ति थी जो छात्रों को बलात् अपनी ओर आकृष्ट करती थी

अपने अंतिम समय में जब वे चिकित्सालय में प्रविष्ट हुए तो हृदय-रोग से पीड़ित थे। शरीर में असह्य पीड़ा थी, किन्तु चेहरे पर मुस्कराहट ज्यों की त्यों थी। सामान्यतः ऐसे समय में रोगी का मानसिक सन्तुलन समाप्त हो जाता है स्थिति ऐसी भी बन जाती है कि वह अपने व्यवहार से परिचारकों को भी चिन्तित कर देता है किन्तु धन्य हैं वे कुञ्जबिहारीजी जिन्होंने ऐसे समय में भी सन्तुलन बिना खोये आने वाली मृत्यु से संघर्ष किया उन्हें मानो मृत्यु का कोई भय ही नहीं था। मैं एक चिकित्सक के नाते निःसंकोच यह कह सकता हूं कि ऐसे रोगी भी मेरे सामने विरले ही आये हैं।

यह मेरे सौभाग्य का विषय है कि ऐसे गुणी, उदार हृदय, महामना ब्राह्मण विद्वान् और साहित्यिक की सेवा का मुझे अवसर प्राप्त हुआ। ऐसी विभूति के चरणों में मेरे श्रद्धा के सुमन सादर समर्पित हैं।

—डॉ० रमेश सिंघवी

प्रज्ञा बुद्धि के परिचायक

प० कुञ्जविहारीजी के असामयिक निधन की सूचना सचमुच अत्यन्त दुःखद रही। मेरा उनसे बहुत अधिक व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं रहा है। विद्यापीठ मे मैं उनका सहपाठी नही था। वे मुझ से बहुत बडे थे और शायद मेरे आचार्य गुरुवर प० रामनारायणजी एव प० मुरलीधरजी के साथ उन्होने साहित्यरत्न की परीक्षा दी थी। जहा तक मुझे उनका स्मरण है, वे अत्यन्त ही हँसमुख व्यक्ति थे, और जहा जाते वही के वातावरण को प्राणवत बना देते थे। इसके अतिरिक्त उनकी एक बात जिसने कि मुझे अत्यन्त प्रभावित किया और मेरे मन मे उनके प्रति श्रद्धाजन्य समरसता जागृत की—वह थी उनकी बुद्धिवादिता। पुरातन विश्वासों के प्रति आंख मूंद कर चलने वाली धर्मान्धता मैने उनमें नही देखी। इसीलिये मेरी बुद्धिवादी विचार धारा को वे अत्यन्त प्रिय लगे। वे कालीजी के मन्दिर की पाठशाला के अध्यापक थे, परन्तु काली के प्रति उनकी बुद्धिवादी अभिव्यञ्जना उनकी असीम प्रज्ञाबुद्धि की परिचायक है। मैंने अपने सहपाठी और अभिन्न मित्र स्वर्गीय भाई पालीरामजी के मुख से कुञ्जविहारीजी की एक कविता सुनी थी जिसका कि प्रभाव मेरे मन पर बहुत गहरा पड़ा। उनकी इस कविता के प्रारम्भिक चार पद तो २५ वर्ष के बाद अब तक भी स्मरण है, वे हैं–

भुवन भू लुंठित साजों मे,
मृत्यु के भैरव बाजों में
तू मुरदो का मधपान करे
कैसे कोई सम्मान करे ?

जीव बलि लेने वाली काली की इससे बढकर और क्या भर्त्सना हो सकती थी? मेरे बुद्धिवादी मस्तिष्क पर इस रचना का कुछ ऐसा गहरा प्रभाव पडा कि पिछले दशहरे पर मैंने जिस तुकबन्दी की रचना की वह एक प्रकार से इन चार पदो का ही विस्तृतकरण था। यही भाव बार-बार मेरे मन में गूंज रहे थे, जिनका कि सरल सहज पोषण भगवान तथागत के निर्मल उपदेशों ने किया। कुञ्जविहीरीजी की यह कविता अगर मुझे कही से पूरी प्राप्त हो जाती तो मैं इस बात का निरीक्षण-परीक्षण कर पाता कि मेरी सम्पूर्ण रचना में उनकी काव्य कृति का कितना भाव स्पष्ट प्रतिबिम्बित हुआ है और इस दिशा मे मै उनका कितना ऋणी हूँ।

रंगून

—सत्यनारायण गोयनका

—: प्रगाढ़ स्नेही :—

श्री कुञ्जविहारीजी से मेरा साक्षात्कार सब प्रथम स्व० श्री बद्रीप्रसादजी आचार्य के माध्यम से ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम चूरू मे सन् १९४७ के अक्टूबर मास म हुआ था। सरल स्वभाव सादा पहनाव, विद्या मे प्रवीण और मधुर मित भाषी, ऐसे सुहृद को पाकर मैं कृतकृत्य हो गया। धीरे धीरे आत्मीयता बढती ही गई और दोनो प्रगाढ स्नेह सूत्र म बध गये। वे मुझे प्यार से सदा "बावजी" कह कर ही सम्बोधन करते थे। जब मैं अपनी तुक बन्दी उनके सामने रखता तो सुमधुर स्मित हास्य मे कहते "गोवि द क कानै चालस्या अर अठैई स्योल साधणी लगा कर सुधारस्या।" फिर दोनो, भाई गोविन्द अग्रवाल के यहा आते और घटो तक सरस साहित्य गोष्ठी चलती रहती, अनेक प्रकार की चर्चाएं होती, वातावरण हँसी के ठहाको से गुजता रहता। लेकिन अब वे सारी बातें स्वप्न सी लगती हैं। श्री विहारीजी की बातें याद कर के चित्त मैं विकलता होती है, आखें भर भर आती हैं। ईश्वर उन्हे चिर शाति प्रदान करें।

श्रीधर आयुर्वेद भवन,
चूरू
६ ५ ६६

वैद्य चन्द्रशेखर व्यास

जब देखा तब हँस मुख पाया

जब देखा तब हँस मुख पाया, जाने कितना द्रव्य कमाया।
खुले हृदय मे मुक्त हस्त से, भर-भर झोली ज्ञान लुटाया।
बिना ग्रह के और न देखा, देने वाला दानी दाता।
मगर तुम्हारे ज्ञान दानकी, बहती देखी गगा माता॥
जिसमें बच्चे कर के स्नान, बन गये हजारो नौजवान।
हे काव्य चतुर तेरे तटपर करते कविता का रसिक पान।
वह गगा तट, वह दानवीर, कवि, मित्र, गुरु, सब कुछ खोया।
विधना की विधिका लेप ओढ, 'रज' वह प्रभु के घर जा सोया॥

चूरू २१-६-६८

चिरजीलाल ओझा 'रज'

मेरे पथ-प्रदर्शक

जिन गुरुजी का स्मरण करते ही एक सरल, त्यागी, तपस्वी, चरित्रवान् और साहित्यिक देश-भक्त का साक्षात रूप आंखों के सामने आ जाता है—उनको मैं प्रणाम करता हूँ। चूरू की जनता उनके इन गुणों से भली भांति परिचित है। मैं उनका "फेमिली डाक्टर" था, यह मेरा सौभाग्य था। उनकी छत्र-छाया मे चार वर्ष तक एक शिष्य के रूप में रह कर बहुत कुछ सीखा। दिनाक १४ सितम्बर १९६७ साय काल के करीब ७ बजे थे। मैं अस्पताल मे रामगोपाल जोशी, श्री पृथ्वीसिंहजी और श्री सत्यनारायण चौमाल के साथ बैठा था। गुरुजी उधर से जा रहे थे। मैंने अपना सदा का सम्बोधन (जो उन को बुलाने के लिये करता था) किया—"बांह छुडाये जात हो······।" यह कडी सुन कर वे जोर से हँस देते और आ जाते। हम सब मिल कर साहित्यिक और राष्ट्रीय समस्याओं पर ही चर्चा करते थे। उस दिन अनायास ही मैं कह बैठा कि गुरुजी मैं अब सैनिक सेवाओं के लिये आर्मी मेडिकल कोर (ARMY MEDICAL CORPS) मे जाना चाहता हूँ। मैं भी देश के लिये कुछ करना चाहता हूँ।

गुरुजी बोले—डाक्टर साहब, शायद आप चूरू की जनता और गुरु जन वर्ग से तग आ गये हैं। ये सब कहां जायेंगे? आपके जाने की तो हम सोच भी नहीं सकते। अगर यूं जाना ही था तो हम लोगों को अपनाने की क्या आवश्यकता थी। फिर गुरुजी कुछ देर तक सोचते रहे, और बाद मे बडे गंभीर शब्दो मे कहा—डा० साहब आप एक ऐसी मजिल की तरफ बढ रहे हैं जिसमें भगवान आप को यश और उन्नति देगा। इस लिये रोकूंगा नही आप अपने गांव बाडमेर और चूरू की जनता के प्रतीक हैं। गरीबों की आवाज कभी मत भूलना। कृष्ण भी तो मथुरा चले गये थे। गुरुजी की आंखों में उस समय आंसू टपक रहे थे। कितना वात्सल्य पूर्ण हृदय था। मैने कहा गुरुजी कृष्ण वृंदावन को कब भूल पाये थे? "ऊधो मोहे व्रज बिसरत नाहिं ——।"

दिनांक २२-७-६८, चूरू से लखनऊ के लिये विदा हो रहा था क्योंकि राजस्थान से आर्मी-मेडीकल कोर के लिये मैं चुना गया था, सुबह १० बजे श्री पृथ्वीसिंहजी और सत्यनारायण चौमाल के साथ गुरुजी के दर्शन करने गया। माताजी अन्दर से दूध के गिलास लाईं। लेकिन पीये कौन? बोले कौन? सब की आंखों से आसुओं की अविरल धारा बह रही थी। गुरुजी की मूक वाणी कह रही थी—"मेरे प्यारे डाक्टर जाओ-सुखी रहो। देश की आवाज में चूरू की आवाज कभी मत भूलना। चिरजीव रहो।" स्वप्न मे भी नही

सोचा था कि यह अन्तिम भेंट होगी। उनके आशीर्वचन स्वर अब भी कानों में गूंज रहे हैं, और सचमुच ही गुरु कुञ्जविहारीजी 'नाता तुड़ा कर चले गये।'

यह २० सितम्बर १९६८ का दिन था—शायद इस त्यागी पुरुष के निधन पर तो भगवान् को भी दुःख हुआ होगा।

"हजारों उनसे मुकद्दर ने की दगा लेकिन,
उन को मिटा के मुकद्दर को भी सुकूं न मिला।"

AMC
आर्म्ड मेस
लखनऊ-२
ता० ८.१०.६८

कप्टिन डा० नवरत्नलाल
आर्मी मेडिकल कोर

शत शत प्रणाम

धार दूध की दे कर के, माँ ने अधरों को खोल दिया।
इन खुले अधूरे अनबोले, अधरों को तुमने बोल दिया॥

तुम तो ममता की मूरत थे, यह परिवर्तन क्यों कर आया।
इस तरह अचानक क्या सूझी उड़ गये छोड़ कर के काया॥

खोलो दृग, मुस्काने वाले देखो इस खड़े नज़ारे को।
देखो क्षण भर फिर सो जाना, मत सुनना अगर पुकारें तो॥

कभी बात न जिन की टाली थी क्या आज टाल कर ही दोगे।
मैं कहता हूं मुंह चूमोगे, देखोगे तो सच रो दोगे॥

बच्चों की भोली आंखों से अश्रु का अर्घ लिये जाओ।
मुस्का कर के मृत्यु को भी जीने का सबक दिये जाओ॥

जाओ गुरु देव तुम्हारे स्वर, गुरु गंगा के हैं दीपदान।
हर शब्द भाग का दर्शक है शत शत प्रणाम शत शत प्रणाम॥

नगर-श्री, चूरु
२२-९-६८

—प्रेमप्रकाश अग्रवाल

A Guide, Friend & Philospher

The insatiable, relentlessly cruel hands of death served a tragic blow to the town of Churu by snapping away so stealthily, so beloved a citizen as Vihariji—the pet name of Pt. Kunj Vihariji Sharma, a household name with reverence.

I can claim some intimacy with the deceased during the last two decades that I am here. He was in Government service as a teacher with mediocre means which are the circumstances that circumvent the inherent growth of any average man. Yet the fact that Vihariji left his stamp and impress on every field of activity in Churu town, speaks volumes for the versatility of his personality.

As I look back, I find it difficult to remember any function, any activity of any institution, society or sect



The three Corners of a triangle– a doctor, an administrator and a teacher considering seriously a point raised by Shri Vihariji, the teacher.

that was not enlivened by his learned as well as witty participation He shed lustre where ever he sat or spoke By his simplicity, sociability, erudition and above all truthfulness he was known and loved by all—rich or poor, high or low, men or women, young or old

His real greatness lay in his sincerity and earnest ness his lofty idealism concurrent with action That all made him an ideal citizen He was so very simple and humble in his ways of life His life was a multifaceted prism, bringing forth variegated, colourful, calming beams of light To enumerate his specific actions in social, cultural educational and moral spheres, will mean a volume in itself But his special heart borne interest had been in making the young boys inherently great He had a special core in his heart for his students It was may I say his hobby, his mission to deal with them in his own, peculiar charming ways to instil in them the real character —the crying need of the day

The more I think the more I feel, it is difficult to fill the void created by the sad demise of my friend in fact the friend of all, Viharji

I end with sorrowful tears in ink on this paper praying for his peace in Heaven and praying that his memory may live ever-green in the annals of Churu as a guide friend and philospher May his simplicity sincerity and greatness as a citizen prove highly infectious to the growing nation to steer clear of all Herculian tasks before the mother country

X Ray Laboratory &
Medical Clinic

Churu, 30-9-1968

Dr Inderjit
L S M F (Pb)

An Eminent Literary Teacher

I am in receipt of your letter dated 23rd Sept. 1968, informing of the premature demise of Shri Kunj Vihari Sharma, an eminent literary teacher of Churu City. I join in your Condolence and pray for the welfare of the soul.

GAJENDRA SINGH

Commissioner, departmental inquiries
Virat Bhawan,
Prithwi Raj Road,
'C' Scheme, Jaipur
Dated the 27th October, 68.

जिन्दगी की राह में जिसने उजाला भर दिया,
ज्ञान का दीपक जला कर के हिये में धर दिया।
खैंच कर के कान दी थी फूक एक दिन याद है,
बढ रहा पथ पर तुम्हारा ही यह आशीर्वाद है।

जाम्रो गुरुजी वन्दना शत वन्दना गाता हूं मैं।
मार्ग दर्शन के लिए उर मे तुम्हे पाता हूँ मैं॥

—बाबूलाल भाऊवाला

चूरू,
२३-२-६९

मेरे बापू

मेरे पू० पितामह ने कठिन और विपरीत परिस्थितियों मे गुजर कर सब प्रथम खासोली ग्राम मे विद्या की मशाल जलाई। न कोई साधन था, न कोई सहारा, न कोई माग था, न कोई माग दशक। अभावो का नगा नृत्य, सामाजिक रूढियो के अभिशाप, अनेक तरह की आपदाओ से घर तहस नहस सा हो था। ऐसी विपरीत परिस्थितियो मे घरेलू विरोध के बावजूद पितामह ने शिक्षा ग्रहण का व्रत लिया और कठिन साधना मे जुट गये। मेहनत भरे अध्यवसाय ने सारी निराशा धो डाली। खासोली के चौगान धोरो पर बठ कर पितामह ने श्रीमद्भागवत, गीता, रामचरितमानस और महाभारत आदि को सितार के सुमधुर स्वरो मे मन भर कर गाया बजाया और सुनाया।

पितामह की कठिन साधना ने आने वाली पीढी को विद्या प्रेमी बनाने का श्रेय प्राप्त किया। उनकी एकलौती दौलत, उनका प्रिय बेटा 'कुञ्ज' विद्यार्थी का रूप धर हाथ मे पट्टी बरता ले, घुघीदार टोपला ओढ़े और हाथो मे चादी के कडे पहने उनके साथ खासोली से चूरू की ओर चला। पिता से भी अधिक मा का दुलारा, तनिक दूर जाए यह मेरी भोली दादी को कतई बरदाश्त नहीं था। लेकिन मेरा बेटा पढेगा, पढकर बडा पडित बनेगा, यह सोचकर दिल कडा कर लेती और उन्हे दादा के साथ कर देती। नित्य घी शक्कर सना एक चूरमे का लड्डू साथ देती और गाव के छोर तक पहुँचाने आती। टीलों के टेढ़ मेढे रास्तों मे अपने पिता के साथ जाता हुआ कुञ्ज जब दिखाई पडना बद हो जाता तब भारी मन से घर की ओर मुडती। लेकिन जसे ही साझ होने को आती फिर उसी जगह आकर अपने लाडेसर की बाट जोहती। दूर के टीले पर से जब वह अपने पिता के साथ आता दिखाई देता तो 'कुञ्ज ओ-कुञ्ज' की आवाज लगाती। गोल मटोल देह बालक कुञ्ज अपनी मा की मीठी पुकार सुनते ही दौड पडता। मा लपक कर अपने लाडेसर को गोद मे उठा लेती और पुचकार कर कुशल क्षेम पूछती। उस भोली की झोली का सवस्व यह कुञ्ज ही तो था। सतजी बाबा कहा करते थे कि मा-बेटे की कहानी कई दिनों तक इसी प्रकार चलती रही।

बचपन तरुणाई मे बदला, अध्ययन चलता रहा। अच्छा खासा गठीला और हृष्ट पुष्ट शरीर, दूध दही का भरपूर भोजन। श्री भगवती के मंदिर (चूरू) मे मां बाप की छत्रछाया और मित्रों के सान्निध्य मे स्वर्गीय आनन्द के साथ साधनामय जीवन चलता रहा। होनी आई और मा अपने लाडले बेटे

को छोड़कर चली गई। मां के चले जाने से बेटे के जीवन में एक बड़ी रिक्तता आगई, अपनी स्नेहमयी मां को वे बहुत ही याद किया करते थे। जीवन के चौतीसवें वसन्त में पू॰ पिता (मेरे दादा) चले गये। अलमस्ती का सारा ही वातावरण जैसे एक-व रगी समाप्त होगया।

कन्धों पर नई जिम्मेवारी आई तो पिताजी ने उसे धैर्य पूर्वक उठाया। वीरों के वीर पुजारी थे वे, हर वक्त वीरता पूर्ण वातावरण। उनकी अपनी भाषा, अपनी शैली थी, बात कहने का ढंग भी निराला ही था। मैं उन से अनेक विषयों की बातें किया करता और वे मेरे योग्य ही उत्तर देते।

घर के बाहर हम चाहे हिन्दी अंग्रेजी कुछ भी बोलें, लेकिन घर में तो "मारवाड़ी" का ही आधिपत्य है। मैंने उनसे पूछा, "बापू, भगवान कठै रैवे?" इस पर बापू ने अपनी स्वाभाविक मुस्कान के साथ उत्तर दिया—

"जठै डोकरी दादी को भगर बिलोवणो बाजै, हरजसां में सरवण सारखै बेटै की कथा गावै। देराणी जिठाणी मुलक मुलक कर चाकी का घमड़का लगावती होवै। नणद के सागै रिमझिम करती भावजड़ी पाणी को दोघड़ ल्यावै। जिकै आंगण में नानकिया दही स्यूं मूंडो लिबाड़्यां ई ऊधम करता होवै, भूवा भतीज्यां मंगल गीत गावै। धूणी ऊपर बाबै कन्नै बीस पाड़्योसी बैठ्या ई रैवै, गल्लां करै, बटाउवां की लड़ी लागी रैवै। नाज का कोठलिया भर्‌या रैवै, घास को बागर लागी होवै, गायां रामती होवै, बाछड़िया कूदता होवै, फलतो फूलतो इस्यो घर होवै, बठै भगवान बसै, सारा देई देवता रमै।"

मेरे बापू भी अपने घर के आंगन को ऐसा ही देखने की कल्पना किया करते थे और इन्हीं गीतों की पंक्तियां गुनगुनाया करते थे। दुःखी के लिए द्रवित होना, सबका हित चाहना और अपने कर्त्तव्य को ईमानदारीपूर्वक निबाहना आदि उनके स्वाभाविक गुण थे। व्यवहारकुशलता उनका अमोघ अस्त्र था। पैंतालीस वर्षों के चूरू निवास के बाद अपने मित्रों, स्नेहीजनों और परिचितों में एक सुहानी याद छोड़कर २० सितम्बर १९६८ को दोपहर को सदा सर्वदा के लिए चले गये।

मेरे पूज्य पिताजी जाइये, स्वर्ग सिधारिये, आपकी आत्मा को परमशांति प्राप्त हो। गृहस्थी की जो जिम्मेवारियां आप मुझ पर छोड़ गये हैं, उन्हें आपकी इच्छा और योजना के अनुसार ही पूर्ण करने का प्रयत्न करूंगा, मुझे विक्रम दो। अगले जन्म में आप फिर मेरे पूज्य बापू बनकर आना...

—दामोदर

पुराय-स्मरण

काछ दृढा कर वरसणा, मन चगा मुख मिट्ठ।
रण सूरा जग वल्लभा, सो हम विरला दिट्ठ॥

इस दोहे के रचयिता के अनुसार ऐसे व्यक्ति विरले ही होते हैं, जिनमे उपरोक्त सभी गुण विद्यमान हो, अर्थात् जो चरित्रवान्, दाता निर्मल मन, मधुरभाषी, शूरवीर और लोक प्रिय हो। लेकिन स्व० प० कुञ्जविहारीजी ऐसे ही विरल व्यक्तियो में से थे।

मनुष्य का सबसे अधिक दुलभ गुण उस का चरित्रवान् होना है और इस लिए कवि ने सब प्रथम इसी की गणना की है। मुझे कई वर्षों तक विहारीजी के निकट सपर्क में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है और मैंने बहुत बारीकी से उन के इस पक्ष को परखा है (भले ही मुझे इस का अधिकार नहीं था) तथा इस जाच परख के आधार पर मैं बल पूवक इस बात को कहने की स्थिति मे हू कि विहारीजो एक सच्चरित्र व्यक्ति थे, उनका दामन चारित्रिक दोषो से रहित था। अपने इसी दुलभ गुण के बल पर वे अनेक सभ्रात घरानो मे निर्बाध पहुँचते थे।

यह तो नही कहा जा सकता कि स्व० विहारीजी के हाथो से धातु के टुकडे बरसते रहते थे किन्तु यह अवश्य कहा जा सकता है कि ज्ञान की निर्झरणी उन के मुख से सदा प्रवाहित होती रहती थी और ज्ञान दान (जो द्रव्य दान से कही बढकर है) देने में वे कभी आलस्य न करते थे। उन का मन चगा था और वे मन में द्वेष की गाठ बाध कर नही रखते थे। यदि किसी प्रियजन की कोई बात उन्हे अच्छी न लगती तो वे उसे स्पष्ट शब्दो मे कह देते थे। "मुख मिट्ठ" वाला गुण तो विहारीजी की वाणी में इतना अधिक था कि हर व्यक्ति उन की वाणी के लिए तृषित ही रहता था, लेकिन उनकी वाणी मे खुशामद या चापलूसी को स्थान नही था। यह सच है कि हाथ में तलवार या बदूक लेकर युद्ध के मैदान मे उतरने का अवसर उन के सामने नही आया लेकिन जीवन सग्राम मे उन्हे कठिन सघर्ष करना पडा और इस सघर्ष से वे कभी विरत नही हुए।

दोहे के अन्तिम गुण के अनुसार लोक प्रिय बन पाना तो और भी दुष्कर है लेकिन विहारीजी को इतनी अधिक लोक प्रियता प्राप्त हुई कि कभी कभी ईर्षा होती थी। किसान, मजदूर, विद्वान् दार्शनिक, बालक, युवा और वृद्ध सभी के वे स्नेह भाजन थे।

दोहे के उपरोक्त छः गुणों के अतिरिक्त भी विहारीजी में एक और विशिष्ट गुण था और वह यह कि वे सदैव दूसरो के गुणों को ही देखते थे, अवगुणों को नही। यदि किसी व्यक्ति में तीन अवगुणों के साथ एक गुण भी होता तो विहारीजी को दृष्टि उस गुण पर ही केन्द्रित होती थी। अपने अवगुणों की अधिकता के कारण वह व्यक्ति भले ही स्वय अपने गुण को न जान सके, लेकिन विहारीजी उस गुण की कुशलता पूर्वक सराहना कर के उसे प्रोत्साहित करते थे। विहारीजी की लोक प्रियता का यह एक रहस्य था।

विहारीजी का पूरा नाम प० कुञ्जविहारी शर्मा बी० ए०, साहित्यरत्न था, माता-पिता शायद नाम के पूर्वार्द्ध 'कुञ्ज' का अधिक उपयोग करते थे, लेकिन उन का प्रचलित और लोक प्रिय नाम 'विहारीजी' ही अधिक प्रसिद्ध हुआ। अपनी साहित्यिक कृतियो के साथ वे 'बनवासी' लिखा करते थे और जैन समाज में अधिकतर 'मास्टरजी' के नाम से पुकारे जाते थे। विहारीजी का कद लम्बा, रंग गेहुँआ, शरीर पुष्ट, सुती हुई नाक, चमकदार आँखे और छाती पर घने बाल थे। उनके ओठो पर मन्द मुस्कान थिरकती रहती थी। किश्तीनुमाँ काली टोपी, सफेद कुर्त्ता, धोती और पैरों मे प्राय: देशी जूते। सक्षेप में यही उन की वेश भूषा थी। पढते समय ऐनक का प्रयोग करने लगे थे। खान-पान, वेश भूषा में मर्यादा का सदैव ध्यान रखते थे। बाजार में या विद्यालय मे कभी नगे सिर नही आते थे और न कभी किसी चाय की दुकान पर बैठ कर चाय पीते थे।

विहारीजी के पिता प० कानीरामजी चूरू नगर के निकटवर्ती ग्राम (लगभग ४ मील दक्षिण पूर्व) खासोली के रहने वाले दाधीच ब्राह्मण थे। कानीरामजी अपने भाइयो मे सब से छोटे थे, लेकिन उन के परिवार मे विद्या का प्रवेश उन्ही के माध्यम से हुआ। कानीरामजी ने खासोली के निकटवर्ती कसबे रामगढ के रूइया विद्यालय मे शिक्षा प्राप्त की। सेठ हरनन्दरायजी रूइया के आग्रह पर विद्यालय के आचार्य ने कानीरामजी को सेठजी के साथ बम्बई भेज दिया। बम्बई मे सेठो का बडा कारोबार था। प० कानीरामजी रूइया परिवार के सम्मानित सदस्य की तरह रहते थे और सेठ जी की हवेली मे स्थित ठाकुर बाडी की पूजा अर्चा भी करते थे।

उन दिनो बम्बई मे श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बडे जोरो से चल रहा था। इस की स्थापना चूरू के श्री गगाविष्णु खेमराज बजाज ने सन् १८७१ मे की थी और इस मे हजारो ग्रथ उपनिषद्, दर्शन, ब्राह्मण, पुराण, स्मृति आदि शास्त्र, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, आयुर्वेद, नाटक,काव्य,ख्याल आदि धड़ाधड़

छप रहे थे। हिंदी, संस्कृत, गुजराती मराठी और मारवाड़ी में ग्रंथ छपते थे। पंडित कानीरामजी इस विशाल कार्य प्रेम मे प्रूफ रीडर बन गये। प्रेस मे उन्हें अनेकानेक ग्रंथो के अवलोकन का अवसर प्राप्त हुआ। अनेक ग्रंथ तो उन्हें कण्ठाग्र हो गये। साल मे २ ३ महीने जब वे अपने गाव आते तो उन ग्रंथों के विविध प्रसंगो को गाया करते, अन्य भाइयो को भी सुनाते।

वि० सं० १९७४ को आदा सुदि ८ को बालक कुञ्जविहारी का प्रादुर्भाव हुआ। वर्षा की झड़ी लगी हुई थी पंडितजी की झोंपडी टपाटप चू रही थी और झोंपड़ी में आसन्न प्रसवा पंडितानीजी लेटी थी। प्रतिकूल मौसिम का ध्यान कर के पंडितजी तम्बू लाने के लिए तुरत ही रामगढ सेठों की हवेली में पहुँचे। सारी स्थिति जानकर सेठो ने तत्काल कृपा आशिर्वों को तम्बू देकर पंडितजी के साथ भेज दिया। लेकिन पंडितजी के पहुँचने तक बालक कुञ्जविहारी का आविर्भाव हो चुका था। कुछ समय पश्चात् रुइया परिवार के एक बाबू स्वय खासोली आये और उन्होने पंडितजी मे कहा नवागत बालक के लिए आप एक पुक्की हवेली बनवा लीजिये। पंडितजी ने बाबू के आग्रह को स्वीकार कर लिया और उन के लिए खासोली मे एक हवेली बन गई। इस के बाद कोई ३ ४ साल तक पंडितजी पौर बम्बई जाते रहे लेकिन फिर बम्बई जाना बन्द कर दिया और गाव में ही रहने लगे।

अब पंडितजी यदा कदा चूरू आते तो बालक कुञ्जविहारी को भी साथ ले आते। अपने माता पिता के एकलौते बेटे थे अत खूब लाड प्यार मे पलने थे। चूरू में सेठ बलदेवदासजी कोठिडेवाला ने काली मैया का एक नवीन मंदिर बनवाया था। उन दिनो पं० कानीरामजी की बूआ के बेटे पं० हणूतरामजी मंदिर मे पुजारी थे इस लिए जब पंडितजी चूरू आते तो हणूतरामजी के पास भी आ जाते थे। एक दिन सेठजी मंदिर मे दर्शन करने के लिए आये तो पंडितजी से उन का साक्षात्कार हुआ और उसी दिन से कोठिडेवाला परिवार के साथ उन के अटूट सम्बन्ध जुड़ गये।

सेठ बलदेवदासजी ने मंदिर के सामने ही श्री मद्भगवत विद्यालय की स्थापना की जिसका उद्घाटन कार्तिक शुक्ला ७ सं० १९७७ को हुआ और सब प्रथम पं० लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी अध्यापक नियुक्त हुये। इस के बाद पं० मल्लिनाथजी चोमाल और श्री गोकलजी व्यास प्रभृति ने भी कुछ काल तक अध्यापन कार्य किया। फिर पं० बालचन्दजी सारस्वत (कुचिलाव) की नियुक्ति हुई। वि० सं० १९८० में पं० कानीरामजी और गुरु श्री हरदेवदासजी गोस्वामी इस विद्यालय म शिक्षक नियुक्त हुए। गुरुजी ने बतलाया कि मैंने लगातार ४० वर्ष तक इस विद्यालय में अध्यापन काम किया।

अब बालक कुञ्जविहारी का शिक्षा क्रम भी चालू हुआ। कुछ दिनों तक तो पंडित कानीरामजी नित्य खासोली जाते रहे, लेकिन बाद मे सेठो ने मंदिर के निकट ही एक नोहरा उन के रहने के लिए दे दिया। इसके बाद वे अधिकतर यहीं रहने लगे। विहारीजी का अध्ययन चलता रहा। माँ बाप के एकलौते बेटे होने के कारण तथा तत्कालीन परंपरा के अनुसार १४ वर्ष की आयु मे ही उन का विवाह कर दिया गया। विवाह बिसाऊ के प० शिवनारायणजी सूटवाल की पुत्री भगवती देवी के साथ वैशाख सुदि १४ स० १९८८ को हुआ।

विहारीजी का अध्ययन चलता रहा और एल०एन०बी हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा दे कर उपरोक्त विद्यालय में ही वे पिता के स्थान पर अध्यापन कार्य करने लगे। पं० कानीरामजी ने अब काली मैया के मन्दिर की पूजा अर्चा का भार सम्भाल लिया। वि० सं० १९९५-९६ मे चूरू के प्राचीन कालेरा बास मे उनका मकान बनकर तैयार हो गया तो वे सपरिवार उस मे आ गये।

इसके पश्चात् विहारीजी हिन्दी विद्यापीठ के जन्मदाता स्व० प० रामनारायणजी जोशी के सम्पर्क मे आये और सन् १९४२ के लगभग इन्हो ने साहित्यरत्न की परीक्षा में सफलता प्राप्त की। हिन्दी विद्यापीठ को इन्हों ने अपनी सेवाए भी दी यहीं श्री मुरलीधरजी सारस्वत एम ए., साहित्यरत्न और श्री सत्यनारायणजी गोयनका आदि साहित्यसेवियों के साथ इनके साहित्यिक सम्पर्क बने। इन दिनों चूरू मे "साहित्य गोष्ठी" भी अपने उत्कर्ष पर थी और विहारीजी इसके अधिवेशनो मे रुचि पूर्वक भाग लेते थे।

सन् १९४४ के करीब एक बार वे पटना गये। वहा उन्होंने राजगढ के सेठ सूरजमलजी मोहता की फर्म मे कुछ महिने कार्य किया। मोहताजी के यहां बोट बनते थे और सरकार को सप्लाई होते थे। विहारीजी ने पटना का एक रोमाचक सस्मरण सुनाते हुए बतलाया था कि एक दिन एक नव निर्मित बोट को पानी में उतारा जा रहा था। वे अपने कतिपय साथियों के साथ गगा के किनारे बधे हुए काठ के एक गट्ठर पर सवार थे, किसी ने बधन खोल दिया और बधन के खुलते ही गट्ठर सब को लिये दिये बडी तेजी से नदी के प्रवाह मे बह चला। उस दिन सबकी मृत्यु निश्चित थी, लेकिन ईश्वर की अनुकम्पा से सभी साथी सकुशल बच गये।

पिताजी के विशेष स्नेह और आग्रह के कारण विहारीजी को पटना से आना पडा और चूरू आने के बाद पुनः पटना जाना सम्भव नही हो सका। इन दिनो चूरू मे इन्टर मिडियेट कालेज बनाने के प्रयत्न चल रहे थे। चूरू के शिक्षा प्रेमी सेठ कन्हैयालालजी लोहिया ने कालेज भवन का निर्माण कराना स्वीकार कर लिया था और १८ दिसम्बर १९४३ को सवेरे भूतपूर्व बीकानेर

राज्य के तत्कालीन महाराजा श्री शार्दूलसिंहजी के द्वारा कालेज का शिला न्यास हो चुका था। लेकिन कालेज भवन के बनने से पूर्व ही वर्तमान बा व उ मा विद्यालय मे कालेज की कक्षाएँ लगनी शुरू हो चुकी थी। तत्कालीन प्रिंसिपल श्री आर०एस० गुप्ता (अब रजिस्ट्रार उदयपुर विश्वविद्यालय) इस कार्य मे विशेष प्रयत्न कर रहे थे। सन् १९४५ मे विहारीजी राजकीय सेवा में प्रविष्ट होकर बागला उच्च विद्यालय में अध्यापन कार्य करने लगे। जुलाई १९४६ मे द्वितीय वर्ष की कक्षा के कार्यारम्भ के साथ ही समस्त मिडिल विभाग पुराने छात्रालय के भवन मे भेज दिया गया जबकि बागला हाई स्कूल भवन में नवी से द्वितीय वर्ष की कक्षाए रखी गई। मिडिल विभाग के प्रधान प० गिरीशचन्द्रजी से विहारीजी की खूब पटती थी। लोहिया कालेज के प्रिंसिपल श्री आर०एस० गुप्ता साहब ने विहारीजी की शिक्षण शैली से प्रभावित होकर उन्हें अध्यापन के लिए कालेज की उच्च कक्षाए दी और विहारीजी की अध्यापन शैली को देखकर उन्होंने इस निर्णय के लिऐ अपने आप को धन्यवाद दिया। विद्यार्थी और प्रिंसिपल महोदय सभी अत्यन्त संतुष्ट एव प्रसन्न थे।

बागला हाई स्कूल को सन् १९६० म हायर सैकेण्डरी और १९६४ में बहुद्देशीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय बना दिया गया। लेकिन विहारीजी विद्यालय के इन सभी परिवर्तित रूपो में निष्ठापूर्वक सेवा करते रहे। यद्यपि वे परीक्षा देने के लिए विशेष उत्सुक नही थे लेकिन साथियो के आग्रह पर उन्होने बी०ए० की परीक्षा दी। वे एम०ए० की परीक्षा भी देना चाहते थे. लेकिन अस्वास्थ्य के कारण इस कार्य को बीच में ही छोडना पडा।

श्री विहारीजी एक आदर्श अध्यापक थे। वे निष्ठापूर्वक पूरा समय अपने विद्यार्थियो को देते थे। उन्हें यह सह्य नही था कि विद्यार्थी का एक मिनिट भी व्यर्थ जाये। उनके पढाने का ढग भी बहुत सुन्दर आकर्षक और वैज्ञानिक था। विद्यार्थी को जो कुछ पढाया जाय वह उसे मन मार कर दवा की घूंट की तरह नहीं बल्कि ताजा गो दुग्ध की तरह खुशी खुशी पीये, यही उनका प्रयत्न रहता था। पढाते समय वे और उनके विद्यार्थी सम्बन्धित विषय में इतने तल्लीन हो जाते थे कि उन्हें पता ही नही लगता कि घण्टा कब बज गया। विद्यार्थी यही चाहते रहते कि घण्टा कुछ विलम्ब से लगे। विद्यार्थियों को अच्छी तरह समझाने के लिये सम्बन्धित पाठ के चित्र भी वे श्यामपट्ट पर बना लिया करते थे। परीक्षा पत्र को जाचते समय उनका दृष्टिकोण उदार रहता था।

इतना सब होते हुए भी वे अपने विद्यार्थी को उद्दण्ड, ढीठ, अमर्यादित और अनुशासनहीन नहीं देखना चाहते थे और (यद्यपि बाद में उन्हें पछताना

हीं होता था) विद्यार्थी के ऐसे आचरण पर वे उसे प्रताडित भी कर देते थे। विद्यालय में रहते हुए विद्यार्थी सच्चे अर्थों में विद्यार्थी बन कर रहे और कर्म क्षेत्र में उतरने पर उत्तम देशभक्त नागरिक बनें, यही उनका दृष्टिकोण रहता था। एक बार विद्यार्थी वर्ग में तोडफोड़ की कुछ प्रवृत्ति पनपी तो वे बड़े क्षुब्ध हुए। विद्यार्थियो की इस प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने के लिए वे सक्रिय हो उठे। विद्यालय से प्रकाशित होने वाली पत्रिका "ज्योति शिखा" मे "शिव संकल्प" एकांकी लिखकर मानो उन्होंने विद्यार्थियों को यह सदेश दिया कि तुम्हारे गुरु को तुम्हारे ये करतब पसन्द नही हैं। हस्तलिखित रूप मे तो विद्यालय से कई बार पत्र निकले थे, लेकिन मुद्रित रूप मे सन् १९६७ में यही "ज्योति शिखा" निकली थी, जिसके प्रधान सम्पादक पं० कुञ्जविहारीजी ही थे। संक्षेप में विहारीजी विद्यार्थियों के लिए प्रेरणा के स्रोत थे, वे उन के अध्यापक भी थे और अभिभावक भी। विद्यार्थियों के प्रति उनका वात्सल्य भाव रहता था। आज भी उन के हजारों छात्र श्रद्धापूर्वक उनका स्मरण करते है।

विद्यालय और विद्यार्थियों के हित साधन के लिए वे सदा तत्पर रहते थे। विद्यालय का मान ऊचा रहे, उसकी शान ऊची रहे, इसके लिए वे सदा सचेष्ट रहते थे। विद्यालय में यदि विद्यार्थियों के बैठने के लिए स्थान की कमी है तो वे और स्थान प्राप्त करने के लिए पोद्दार या बागला सेठों के पास पहुँचते। यदि विद्यार्थियों के लिए टंकण यन्त्रो की कमी है तो भागे भागे कलकत्ता जाते। महाप्रयाण से कुछ समय पूर्व तक भी वे ऐसे कार्यों के लिए प्रयत्नशील रहे। गत वर्ष (सितम्बर १९६८) जब सेठ जुग्गीलालजी पोद्दार (फर्म - जौहरीमल रामलाल, बम्बई) चूरू आये तो प्रधानाध्यापक श्री रामानन्दजी गुप्ता के साथ विहारीजी पोद्दारजी के पास पहुँचे और सेठजी ने सहर्ष १०८४३५ वर्ग फुट जमीन विद्यालय को प्रदान करदी।

अपने सहयोगी अध्यापकों के साथ उनका बर्ताव बिलकुल भाइयों जैसा होता था। सभी अध्यापक बन्धु उनका सम्मान करते थे और उनके सामने अपने मन की बात कहने में संकोच नही करते थे। प्रधानाध्यापक भी उनके कार्य और व्यवहार से सदैव सन्तुष्ट व प्रसन्न रहते थे। उनके कार्य काल में प्रिंसिपल गुप्ता साहब सहित जितने प्रधानाध्यापक आये सभी उनकी कार्य कुशलता और निष्ठा से बहुत अधिक प्रभावित हुए।

विहारीजी एक भावुक कवि, उत्तम लेखक, कुशल वक्ता और जिन्दादिल व्यक्ति थे। रात दिन उनका चिन्तन चलता ही रहता था, लेकिन गत कुछ वर्षों मे उन में कुछ विरक्ति सी आ गई थी। जब मैं उनसे कुछ लिखने के लिए

अनुरोध करता तो कहते, मैं तो हर समय लिखता ही रहता हू, लेकिन कागज पर उतारना अब मेरे से नहीं होता। अपने साहित्यिक जीवन के प्रारम्भ में उन्होंने कुछ उद्‌बोधक कविताए लिखी थी, जिनमें से जो उपलब्ध हो सकीं उन्हे अ यत्र दिया जा रहा है। यो आवश्यक होने पर वे समय समय पर गद्य या पद्य में लिखते रहते थे, लेकिन उन्हे एकत्र करके न रखने से वह सारी सामग्री इधर उधर बिखर गई। उनमें से कुछ पूरी कुछ अधूरी उपलब्ध हो सकी कुछ गीतिकाए आदि श्री सोहनलाल जी होरावत के सौजन्य से प्राप्त हुइ। बाद की कविताओ में कुछ तो राष्ट्रीय पर्वों पर कही गई सामयिक कविताए हैं या जैन धर्म से सम्बन्धित गीतिकाए आदि।

पद्य की तरह गद्य पर भी विहारीजी का अच्छा अधिकार था। 'मलयज की महक'' नामक गीतिकाओ के सग्रह मे उनके द्वारा लिखी गई भूमिका से कुछ अश दृष्टव्य हैं—

''समय की सुनहली रेती की रगड से सम्राटो के सजीले कीर्तिस्तम्भ, कण कण हो मिट्टी मे मिल गये-सम्पदा और सौन्दर्य की खाक हवा मे उड गई, पर समय समय पर अवतरित हमारे वीतराग त्यागी तपस्वियो की विचार धारायें उनकी वाणी अनन्तकाल के लिए अमर है अदम्य है क्योंकि उनमे विश्वहित की भावना के बीज सन्निहित हैं। आज भी इस विज्ञान विमोहित विश्व की चटकीली चकाचौंध स त परम्परा की मजुल मन्दाकिनी को सुखा न सकी है।''

''वीर वशावली का देदीप्यमान सन्त सुरत्न तेरापथ का परमाराध्य आचार्य अणुव्रत आन्दोलन का ओजस्वी प्रवर्तक परम पूज्य श्री तुलसी अपने सघ सहित आध्यात्मिक आधार पर जन-जीवन को विशुद्ध बनाने में व्यस्त है। इनके विचार समुद्रो पार सुनाई पडने लगे हैं।

सूने आगन मे अपनी वृद्धा माता के समीप धीर गम्भीर मुद्रा मे, श्री ने उस दृश्य का स्मरण किया। चार में से तीन मृग तो एक साथ छलांग भर अपने लक्ष्य को लाघ गये थे चौथा जरा ठिठका था... .. एटम की आग से सोये दृश्यो का सत्यानाश करने वाले युद्धवीरो की क्रूर कहानियो से ऊब इतिहास जब इन सच्चे विश्व हितैषियो की जीवनिया लिखेगा तो उनकी वलियों पर सजीवनी शक्तियां जगमगा उठेंगी।

आपकी कवि प्रतिभा से प्रसूत भिन्न भिन्न तर्जों में तनी बुनी, भिन्न भाषाओ में विभूषित प्रवचन प्रवाह में हार शृङ्गार में गूथी मुक्तामणियो मनोहारी प्रतीत होती है।''

इसी प्रकार सस्मरण और एकाकी लिखने में भी वे कुशल थे। हिन्दी

तरह राजस्थानी पर भी उनका अच्छा अधिकार था। इस की छटा उन के "बातां ही चालै" नामक लोकप्रिय राजस्थानी कथा संग्रह में देखी जा सकती है जो "नगर-श्री चूरू" से प्रकाशित है। वात कहने का उनका ढंग भी वड़ा प्रभावशाली था। कथा के प्रसङ्गानुकूल ही नाटकीय ढङ्ग से उनकी भाव भंगिमाये बनती रहती थी, श्रोता को लगता, जैसे वह चल-चित्र देख रहा हो।

सभा सम्मेलनों का सयोजन करने में विहारीजी एक ही थे। छोटी से छोटी गोष्ठी से लगाकर वडे से वडे समारोहों का सयोजन करने में वे प्रवीण थे। नये वक्ता को भी वे वेबस नही होने देते थे। अपने जिस मनोगत भाव को वक्ता स्वयं स्पष्ट नही कर पाता उसे वक्ता के बोल चुकने पर वे बडी खूबी से व्यक्त कर देते थे। सांस्कृतिक समारोहों में कवियो का आवाहन प्राय: नवीन पद बना कर ही किया करते थे और कवि के बोल चुकने पर कवि ने क्या कहा है, कैसा कहा है. इसकी पद वद्ध विवेचना सुना कर अगले कवि को वोलने का निमन्त्रण देते थे। श्रोताओं पर भी उनकी वाणी का पूरा असर रहता और वे शान्तिपूर्वक सारे कार्यक्रम को सुना करते थे। गत १६ अगस्त (अगस्त-१९६८) की रात्रि को नगर में तत्कालीन जिलाधीश श्री जी० रामचन्द्र की अध्यक्षता में जो कवि सम्मेलन हुआ था, उसका संयोजन विहारीजी ने ही किया था। विहारीजी के कुशल संयोजन से वे इतने प्रभावित हुए कि विहारीजी के अचानक दिवगत हो जाने का उन्हे अत्यन्त दु:ख हुआ और नगर श्री के सभा-भवन में भाव-भीनी शोक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्होंने कहा कि मैंने अनेक सम्मेलन समारोह देखे है, लेकिन स्व० विहारीजी जैसा कुशल संयोजक अब तक नही देखा।

स्वाध्याय में उनकी गहरी रुचि थी। समाचार-पत्र नित्य नियम से पढते थे, साथ ही कुछ उच्च स्तरीय पत्र-पत्रिकाएं भी। महाप्रयाण के दिन प्रात: अस्पताल जाते समय भी उन्होंने अखबार मगवाकर पढा था। आधुनिक कवियों में उन्हे श्री मैथिलीशरण गुप्त और जयशंकर प्रसाद विशेष प्रिय थे तो लेखकों में श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन और श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदी के प्रति वडी श्रद्धा रखते थे। श्री बनारसीदासजी का लेख जहां भी देखते, अवश्य पढते और मुझ से भी कहते कि अमुक पत्र में आज चतुर्वेदीजी का लेख छपा है। श्रद्धेय चतुर्वेदीजी के प्रति मेरी भी वडी आस्था है। वे उन भूली विसरी विभूतियो को प्रकाश में लाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते है, जिनको यह निगुरी दुनिया भुला चुकी होती है। वस्तुत: उनका तो दीन ही कामिल की इवादत करना है।

भारतीय संस्कृति के प्रति वे बडे निष्ठावान थे। भारतीय आदर्शों के प्रति

उनके मन में बड़ी श्रद्धा थी। रामचरित मानस और साकेत के पावन प्रसङ्गों को सुनाते समय वे पुलकित हो उठते थे तो भगवान् श्रीकृष्ण की रास लीलाओं के पद गुनगुनाते समय भी आनन्दविभोर हो जाते थे। सूर, मीरा और रसखान के भाव भीने पद गाते समय उनकी आंखें सजल हो जाती थी तो प्रताप और शिवाजी की शौर्य गाथाएं कहते समय उनके भुजदण्ड फड़क उठते थे।

अस लेगो अणदाग, पाघ नेगो अणनामी।

पद्यांश उनके मुख से अनेक बार सुना था। महात्मा गांधी, सरदार पटेल, श्री जवाहरलाल नेहरू नेताजी सुभाषचन्द्र बोस और श्री लाल बहादुर जैसे मनस्वियों की उनके मन पर अमिट छाप थी। संत विनोबा को वे एक आदर्श पुरुष मानते थे और उनकी कार्य प्रणाली में गहरा विश्वास रखते थे। यों तो वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना के वे पोषक थे किन्तु भारत के कण कण से उन्हें विशेष प्यार था। गंगा यमुना की पवित्रता और हिमाचल की उच्चता से वे गर्वित थे। राजस्थान के प्रत्येक सिकता कण को वे शौर्य में सना और गरिमा से पूरित देखते थे। इस धरती की गौरव गाथा गाते कभी अघाते न थे।

सभी धर्मों के प्रति उनके मन में समादर की भावना थी किन्तु धर्म के नाम पर चलने वाले ढकोसलों के वे कट्टर विरोधी थे। जीवित समाधि लेने वाले एक ढोंगी साधु के कारनामों का एक बार किस प्रकार पर्दा फाश किया गया था इसका रोचक विवरण उन्होंने मुझे सुनाया था।

पिछले कुछ वर्षों से जैन धर्म (तेरापंथ) की ओर उनका विशेष आकर्षण हो गया था। विहारीजी के अनन्य मित्र श्री मंगलचन्दजी सेठिया के सम्पर्क और अनुरोध के कारण उनका जैन सन्तों के मध्य आवागमन प्रारम्भ हुआ। श्री सोहनलालजी होरावत के समग से यह आवागमन और अधिक बढ़ा। आचार्य श्री तुलसीगणी के चूरू पधारने पर जब विहारीजी उन के सान्निध्य में आये तो जैन धर्म की ओर उनका आकर्षण तेजी से बढ़ा। आचार्य श्री के विशिष्ट व्यक्तित्व जैन धर्म के उच्च आदर्श और जैन साधु साध्वियों के निस्पृही जीवन ने उन्हें विशेष रूप से प्रभावित किया और वे शीघ्र ही जैन धर्म की गतिविधियों में रम गये। आचार्य श्री भी उनकी कार्य प्रणाली और ठोस लगन से प्रभावित हुए।

विहारीजी अब जैन धर्म से सम्बन्धित सभी स्थानीय गतिविधियों में प्रमुख भाग लेने लगे बल्कि कहना चाहिये कि नगर में होने वाले जैन धर्म सम्बन्धी सभी कार्यक्रमों के आधार स्तम्भ बन गये। जैन धर्म का कोई भी कार्यक्रम शायद ऐसा न होता था जिसका संयोजन विहारीजी न करें। वि० सं० २०११ में विद्वान् जैन मुनि श्री चन्दनमलजी का चातुर्मास चूरू में हुआ। मुनि

श्री द्वारा रचित हिन्दी, गुजराती, मारवाडी, पंजाबी और संस्कृत की सरस गीतिकाओं का विहारीजी ने संग्रह किया जो "मलयज की महक" नाम से प्रकाशित हुआ। विहारीजी ने ही इसकी विद्वतापूर्ण भूमिका लिखी जिसमें जैन धर्म के प्रति उनके आकर्षण की स्पष्ट झलक दिखलाई पड़ती है।

इसके पश्चात् वयोवृद्ध मुनि श्री सोहनलालजी (सुराणा–चूरू) की भावपूर्ण गीतिकाओं ने विहारीजी को खूब प्रभावित किया। मुनि श्री की ओजपूर्ण वाणी प्राप्त कर वे गीतिकाएं और भी अधिक प्रभावपूर्ण बन गई थी। विहारीजी ने मुनि श्री के दर्शन और उनकी वाणी का लाभ मुझे भी प्राप्त करवाने की कृपा की। उनके संयोग से मुझे भी जैन साधु-साध्वियों की गीतिकाओं और उनके प्रवचनो से लाभान्वित होने के सुअवसर प्राप्त होते रहे। विहारीजी के उदार सहयोग से ही शतावधानी मुनि श्री महेद्रकुमारजी 'प्रथम', और अणुव्रत परा-क मुनि श्री नगराज जी के दर्शनो व प्रवचनों का लाभ भी मुझे प्राप्त हुआ।

आचार्य श्री ने जब अणुव्रत आंदोलन का श्रीगणेश किया और स्थान-ान पर अणुव्रत समितियों की स्थापना की जाने लगी तो चूरू नगर में 'अणु-त समिति' की स्थापना और उसके संचालन में श्री विहारीजी का ही प्रमुख ाग रहा। विहारीजी ने अपने अभिन्न मित्र श्री मंगलचन्दजी सेठियां को रणा देकर लगभग ६० चित्र बनवाये। इन चित्रो में अणुव्रत आंदोलन के त्येक नियम पर कलात्मक विवेचन देने वाले भाव दृश्य थे। ये चित्र चूरू और लकत्ता मे तैयार करवाये गये। इन चित्रों को तैयार कराने का श्रेय श्री हारीजी की अनोखी सूझ-बूझ को ही है। तेरापथ द्विशताब्दी समारोह पर न चित्रो को प्रदर्शित किया गया तो इनकी मुक्तकंठ से सराहना की गई। न्य अवसरों पर भी इन चित्रो को प्रदर्शित किया गया जिससे कि सर्व साधा-ण इन से प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

चूरू में "महिला अणुव्रत समिति" की स्थापना और उसके सचालन का ा तो विहारीजी को ही है। पर्दे मे रहने वाली सम्भ्रान्त घरानो की महि-ओ को प्रशिक्षण और प्रोत्साहन देकर उन्होने उन्हें अणुव्रत समिति के मञ्च आ कर अपने मनोगत भावो को प्रकट कर सकने योग्य बनाया। महिला णुव्रत समिति की बालिकाओ मे अनेक तरह की प्रतियोगिताये चालू की गई, सके फलस्वरूप मौलिक परिवर्तन हुए, बहिनें आज भाइयो से पीछे नही ी, मानो ऐसी होड लग गई। इस प्रकार समय समय पर विभिन्न आयो-करके विहारीजी ने अणुव्रत समितियो को सक्रिय बनाये रक्खा, जिसके स्वरूप काफी रचनात्मक कार्य हुआ।

चूरू के अनेक कुलीन परिवारो के साथ विहारीजी के घरेलू सम्पर्क बन

गये थे और उन घरो में उन का निर्बाध आवागमन होता था। सेठ शोभाराम जी कोलिड़ावाला के प्रति उन की पूज्य भावना थी तो गंजनाथजी दुर्गान्तजी उनके भ्रातृतुल्य थे इसी प्रकार शोभारामजी की पुत्रियां गीता सीता चन्दा आदि भी बिहारीजी को सगे भाई की तरह ही मानती थीं। भीमसरिया परिवार के साथ भी उनके आत्मीय सम्बन्ध थे। लड्डूरामजी भीमसरिया के असामयिक निधन से उन्हें बड़ी वेदना हुई थी। लड्डूरामजी बहुत ही सज्जन व्यक्ति थे और यद्यपि मेरा उनसे विशेष परिचय नहीं था लेकिन उनकी सज्जनता की छाप मेरे मन पर थी और इसलिए यह दुखद प्रसङ्ग याद आने पर मेरे मन में भी पीड़ा का अनुभव होता था। उनके निधन के समय उनके बच्चे बहुत छोटे छोटे ही थे जिन को बिहारीजी ने पूर्ण वात्सल्य भाव से शिक्षा दी और ईश्वर की अनुकम्पा से आज वे उत्तम नागरिक हैं। श्री आशारामजी वियोगी महावीरप्रसादजी सराफ मालचन्दजी शर्मा आदि उनके प्रिय सहपाठी रह चुके हैं। श्री मंगलचन्दजी सेठिया उनके परमप्रिय मित्र थे जब मंगलचन्दजी चूरू होते तब शायद एक दिन भी ऐसा नहीं होता था जिस दिन बिहारीजी उनसे न मिलें। लगभग २१ वर्ष पूर्व श्री मोहनलालजी हीरावत से उनका सम्पर्क जुड़ा और उसके बाद यह सम्पर्क घनिष्ठतर होता गया। श्री बिहारीजी का उनके घर पहुँचना नियमित सा हो गया था। श्री मोहनसिंहजी राठौड़ से भी जब से भाईचारे के सम्पर्क बने तो अन्त तक वैसे ही बने रहे।

विश्वासपात्र मित्र होने के साथ साथ बिहारीजी एक अच्छे पड़ौसी भी थे। यों तो पूरे मोहल्ले का स्नेह उन्हें प्राप्त था लेकिन श्री मोतीलालजी स्वर्णकार उनके घनिष्टतम पड़ौसी थे। स्व० श्री बद्रीप्रसादजी आचार्य (ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम) के प्रति उनकी गहरी श्रद्धा थी और आचार्य जी के मन मंदिर में भी उनके प्रति पूर्ण वात्सल्य भाव था। स्वामी श्री कान्हड़दासजी के प्रति भी बिहारीजी की बड़ी श्रद्धा थी। यह श्रद्धा सम्भवत उन की निष्काम जनसेवा के कारण ही अधिक रही हो। जन धर्म की गतिविधियों में विशेष भाग लेने के कारण अनेक श्रद्धालु जन श्रावकों श्री हनुमतमलजी सुराना खींवकरणजी बाँठिया और डूंगरमलजी कोठारी आदि से उनके सम्पर्क जुड़ गये थे। नगर के अनेक उच्चतम अधिकारियों के साथ भी बिहारीजी के घनिष्ट सम्पर्क थे। यों बिहारीजी के स्नेहीजनों की सूचि बहुत लम्बी है और उन सब नामों का उल्लेख यहाँ हो सकना सम्भव नहीं है।

जहां तक मेरा अपना सम्वन्ध है श्रद्धेय श्री विहारीजी से मेरी घनिष्ठता वि० सं० २०१३ से ही वढी थी। यद्यपि मेरे स्व० पिताजी के साथ यदा-कदा उन की साहित्यिक चर्चा होती थी और मेरे अग्रज श्री सुबोधकुमारजी अग्रवाल समानधर्मी (कवि) होने के नाते पहले से ही उनके विशेष सम्पर्क में थे, लेकिन विहारीजी के साथ मेरी घनिष्ठता उपरोक्त समय से ही वढी और फिर वढती ही चली गई। श्री विहारीजी की मुझ पर विशेष कृपा थी और वे मेरे पास घन्टों बैठा करते थे, अनेक विषयों पर चर्चा होती। जब कभी श्री चन्द्रशेखर-जी व्यास भी आ जाते तो यह गोष्ठी और अधिक लम्वी और सरस बन जाती थी। जहां तक मैं समझता हूं, श्री विहारीजी मुझ से अपनी कोई वात छुपा कर नहीं रखते थे। मैं उनका अन्तरंग वन गया था, कभी कभी मुझसे कहा करते, कम से कम एक स्थान तो ऐसा होना चाहिए कि जहां अपने मन की वात कह सकूं। अपने सम्वन्ध में यहां अधिक कुछ न लिखकर इतना ही लिखना चाहूंगा कि मैं उनका प्रवल विश्वास और प्रगाढ स्नेह अर्जन कर सका, यह मेरे लिए गौरव की बात है।

कार्तिक कृष्णा ४ सं० १९९२ को उनके ज्येष्ठ पुत्र वनवारीलाल, चैत्र कृष्णा ११ सं० १९९४ को दूसरे लडके दामोदरप्रसाद और मार्गशीर्ष शुक्ला ८, सं० २००३ को कनिष्ठ पुत्र श्यामसुन्दर का जन्म हुआ। इसी प्रकार उन्हे तीन कन्याओं की प्राप्ति हुई, शान्ति, विमला, सुगणा।

विहारीजी की स्नेहमयी माता का स्वर्गवास वि० सं० २००१ के लगभग हुआ और पितृ विछोह सं० २००७ ज्येष्ठ वदि ६ को हो गया। लेकिन इन सव से जवरदस्त आघात उन्हे वि० स० २०५२ ज्येष्ठ वदि ६ को लगा जव उनका वडा लडका वनवारीलाल लम्वी बीमारी के वाद सारे परिवार को शोक-सागर में डुवो कर चला गया। यद्यपि विहारीजी इस मर्मान्तिक घाव को छुपाये रखते थे, लेकिन यह तो रिसता ही रहता था। इतना वचाव अवश्य हो गया था कि रुग्ण रहने के कारण उसका विवाह नही किया गया था।

शेप सारे वच्चों की शादियां विहारीजी की विद्यमानता में ही हो गई थी। दामोदरप्रसाद का विवाह महनसर के पं० रामकुमारजी जाजोदिया की वेटी सावित्री के साथ और श्यामसुन्दर का विवाह चिडावा के पं० वजरगलालजी कुदाल की वेटी विजयलक्ष्मी के साथ हुआ। वडी लड़की शांति का विवाह श्री भंवरलालजी कुदाल सरदारशहर, मंझली लडकी विमला का विवाह लक्ष्मणगढ के श्री वेणीप्रसादजी रणवा और छोटी लड़की सुगणा का विवाह श्रीचतुर्भुजजी रतवा (सलामपुर) के साथ हुआ। उपरोक्त सन्तानों के अतिरिक्त विहारीजी

अपने पीछे पत्नी, एक पौत्र चि० रमेश और तीन पौत्रियां—उषा, सुमन और सरोज छोड़ गये।

मधुमेह की बीमारी उन्हें विरासत में मिली थी जो उनके जीवन के अन्तिम वर्षों में कभी कभी उग्र हो उठती थी। इसी मध्य मूंदड़े के बी डी वागला अस्पताल में डॉ० शंकरलालजी का आगमन हुआ और शीघ्र ही विहारीजी के साथ उनकी घनिष्ठता हो गई। उन्होंने विहारीजी को नीरोग बनाने के लिए भरसक प्रयत्न किये अनेक बार बिना बुलाये ही उन्हें संभालने घर पहुंच जाते थे। इसके पश्चात् डा० आर एस सिंघवी साहब ने उनका इलाज करना शुरू किया। निधन से कुछ समय पूर्व विहारीजी का स्वास्थ्य बहुत कुछ सुधर गया था वजन भी घटा था। लेकिन १८ सितम्बर १९६८ को पढ़ाते पढ़ाते ही उन्हें दिल का दौरा पड़ा। थोड़ी देर बाद कुछ स्वस्थ हुए तो घर पहुंचाये गये। उस रात को तकलीफ रही—अगले दिन कुछ ठीक रहे लेकिन रात को फिर तकलीफ बढ़ गई। सवेरे डॉ० सिंघवी घर पर आये तो विहारीजी बिल्कुल भले चंगे लगते थे। डॉक्टर साहब ने कहा कि वैसे तो कोई खास बात नहीं है लेकिन यदि ये अस्पताल चले चलें तो वहां मैं इन्हें सम्भालता रहूंगा। दामोदर के आग्रह पर विहारीजी ने स्वीकृति दे दी और दामोदर जीप ले आया। इस मध्य विहारीजी ने हजामत बनवाई और अखबार मंगाकर पढ़ा। जीप आ गई तो कुर्ता पहना सिर पर टोपी रखी एक नजर घर पर डाली और जीप उन्हें लेकर अस्पताल की ओर चल पड़ी। लेकिन वहां पहुंचने के दो-तीन घंटे पश्चात् उन्हें फिर दिल का दौरा पड़ा, और उनकी आत्मा कलेवर को छोड़कर स्वर्ग सिधार गई।

इस अप्रिय समाचार से नगर में शोक की लहर व्याप्त हो गई। वागला विद्यालय के सभी शिक्षक छात्र और कर्मचारी विषाद में डूब गये। विहारीजी के अन्तिम दर्शन करने और उनकी शव यात्रा में शामिल होने के लिए झुंड के झुंड विद्यार्थी शिक्षक मित्र, सम्बन्धी पड़ोसी और परिचित बड़ी संख्या में उनके घर पहुँचे। सभी शोक विह्वल थे सभी की आंखें अश्रुपूरित थी लेकिन विधि के विधान के आगे किसी का वश नहीं चलता। अपार जन समूह के साथ शव यात्रा चली और विहारीजी की पार्थिव देह अग्नि-देव को समर्पित कर दी गई।

शव-यात्रा से लौटते लौटते उनके स्नेहीजनों ने उनकी स्मृति को स्थायी बनाने हेतु एक स्मारक निर्माण की योजना बना डाली जिसके फलस्वरूप विद्यालय भवन के पश्चिमी पार्श्व पर "कुञ्जविहारी ज्ञान कक्ष" का निर्माण हुआ जो युगों युगों तक विद्यार्थियों को ज्ञान का प्रकाश देता रहेगा।

नगर-श्री के सभा-भवन में २२ सितम्बर को माननीय जिलाधीश महोदय की उपस्थिति में उनके स्नेहीजनों ने उन्हें भाव-भीनी श्रद्धाञ्जलियां अर्पित करते हुए परमात्मा से स्वर्गीय आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना की।

साथ ही श्री "कुन्जविहारी स्मृति ग्रथ-माला" चालू करने का निश्चय किया गया जिसके अंतर्गत प्रथम पुष्प के रूप मे ''बातां ही चालै'' नाम से उन का राजस्थानी कथा संग्रह प्रकाशित किया गया, जो बड़ा लोकप्रिय हुआ। उसी ग्रन्थ-माला के अन्तर्गत दूसरा पुष्प "कुन्जविहारी स्मृति सुमन" का प्रकाशन हुआ जो आपके हाथों में है।

—गोविन्द अग्रवाल

*नगर-श्री, चूरू
१८/७/६९



स्नेह मूर्ति माँ

जिन हाथों से माँ, मल वाले
चिथड़ों को मल मल धोती थी,
परवाह न बदबू की किञ्चित,
धोती मन में खुश होती थी।

जिन हाथों पर हलरा हलरा,
बोबों से दूध पिलाती थी,
मीठी मीठी दे दे थपकी
आंचल में ढांक सुलाती थी।

जिन हाथों की उंगली से माँ,
चन्दा मामा दिखलाया था,
जिन हाथों की अंगुली के बल,
आंगन में चलना आया था।

गोदी में मुझे बिठाने को, अब भी कितने लालायित हैं,
माँ ! तेरे उन प्रिय हाथों में, ये सादर कुसुम समर्पित हैं।

भोली माँ !! तेरे भोले की, इतनी सी नेक कमाई है,
सकुचाते सकुचाते से माँ चरणों में आज चढ़ाई है।

भूलो मेरे अल्हड़पन को, भूलो मेरी नादानी को,
भूलो माँ, अपने जीवन की, करुणा से भरी कहानी को।

कहना मत माँ तुम बापू से, बातें इन तुतली तानों की,
उनको फिर अर्पण कर दूंगा, 'माला मेरे अरमानों की'।

जिनका अनुराग भरा, प्यारा, पल पल में हृदय पिघलता है,
जिनके मुसकाते से मुख से, 'प्रिय बेटा' शब्द निकलता है।

वे भक्त मुरारी माधव के, ब्रज के गौरव को गाते है।
कहते श्री हरि की पुण्य कथा, कितने गद् गद हो जाते हैं।

बस, चाह यही मां, तेरी हम, गोदी में बैठ विनोद करें,
बापू का हाथ रहे सिर पर, जीवन में मंगल मोद भरें।



माँ मरुधरा



जिसके पदतल शोभित हैं, दुर्गों के दिव्य किरीटों से ।
जिसकी चट्टानें चर्चित हैं, शोणित के पावन छींटों से ॥

जिसके मस्तक की माग सुघड, आडावळ आडी लीक पडा ।
स्वातन्त्र्य समर का परिचायक, कु भा का कीर्ति स्तभ खडा ॥

जिसमे गर्जन करता चम्बल, चिकनाता भूधर भालो को ।
यश गाता वीर वसुन्धर का, लहराता लाल दुशालो को ॥

उत्तर मे उजले धोरो का, कुछ लम्बा सा भू भाग पडा ।
लगता है कितना सौम्य सुघड मरु का यह गोरा सा मुखडा ॥

जिसके थल थल पर देवलियाँ, वन वन झूझार झमकते हैं ।
जिस के कण कण मे जोहर के, चिनगारे अभी चमकते हैं ॥

जिन के अश्वों की वक्र टाप, कर भग्न हृदय पाषाणों के ।
अर्बुद पर अकित करती थी, विक्रम रण बके राणों के ॥

भटका करती भूखी प्यासी, चण्डी मेवाडी माटी मे ।
नाची थी खाली खप्पर ले, राणा की हल्दी घाटी मे ॥

तीरा पर तन तोमा करते, थे भाल जहां काले काले ।
जिन के साकों की अमर कथा गाते अब भी निर्भर नाले ॥

जिस मे हर जगह हजारों हो हम्मीर हठीले सोते हैं ।
जिन की करणी कर याद यवन, अब भी कब्बर मे रोते हैं ॥

जिस मे जन्म बप्पा रावल, क्षत्रिय भूपों के मुकट मणी ।
जिस मे सागा से समर शेर, कायल जैसे तलवार धणी ॥

जिस ने जन्मे थे बीका और अम्मर से राज कुमारों को।
शाही दरबारों के खंभे, रोते जिनकी तलवारों को ॥

जिस के ढलमलते धोरों में, 'गोरा' गज हर्षा करते थे।
जिस की पीली पीली रज पर 'बादल' से वर्षा करते थे ॥

जिस के पृथ्वी के लम्बे भुज, खाण्डों के खेल दिखाते थे।
उस के ही स्वर इस मरुधर को सच्चा संगीत सुनाते थे ॥

जिस के बेटे व बेटी ने, राखी की रेख बढाई थी।
अनजान बहिन के भाई बन, शीशों की बलि चढाई थी ॥

जब बाँध कमर में बच्चों को, माँ बहिनें चढ़ी चिताओं पर।
जौहर ज्वाला से भी दुगनी, थी आभा पुत्र पिताओं पर ॥

जिस में कृष्णा कोडमदे सी, घर घर पद्मावत पलती थीं।
अवसर पर निर्भय शेरनियां, तलवारें तान निकलती थीं ॥

जिस के रण थल में रमती थी, दुर्गावत दुर्जय वीरा सी।
महलों में नाची मोहन की, वह मुक्त कुंतला मीरा थी ॥

आकर गिरधर गोपाल यहां, मुरली का स्वर साधा करते।
अपनी मतवाली मीरा के, पग में घुंघरू बांधा करते।

जिस की पन्ना ने पत्थर बन, धायों का धर्म निभाया था।
पर पूत बचाने के बदले अपना नन्हा कटवाया था ॥

अस्मत आजादी की खातिर, शूरों सतियों ने क्या न किया ?
रण चंडी ने जब भी मांगा, रणपुत्रों ने सर्वस्व दिया ॥

जिसके दुरसा व मिश्रण की जिह्वा से शोले झड़ते थे।
जिन की वाणी का गर्जन सुन मुरदे तलवार पकड़ते थे ॥

पीथल की रसवन्ती बेलि, हाडी की अनुपम सहनानी।
भामा की थैली से उमड़ा, चांदी की गंगा का पानी ॥

रक्त ध्वज फहराने लगता, शूरो में शौर्य सुलग जाता।
म्यानो में खड्ग खनक उठते, अलसाया जीवन जग जाता ॥

जिस के बूढे राठोडो में अब भी वह रक्त उबलता है।
रणसींगे सुन कर शेरो का सोना बल खाने लगता है॥

जिस में परमेश्वर आप स्वय ज्ञानी कपिलेश्वर तपते हैं।
जिस में मा करणी के मठ के सोने के कलश चमकते हैं॥

जिस में जोधाणा जयपुर है, मेवाड अजय महाराणा का
कोटा बूदी अजमेर तथा गढ गूज रहा बीकाणा का॥

जिस में पीछोला राज समद अनगिनती झीलों की झाकी।
आबू के मन्दिर महलो की महिमा बोलो किसने आकी ?

मट काचर बोर मतीरे हैं, जिस की मिटटी लासानी में।
लाखो मन मोती निपज रहे, श्री गग नहर के पानी मे॥

शक्ति भक्ति साहित्य तथा, वाणिज्य कला में बढकर है।
शूरो सतियो की दिव्य धरा, अनुपम यह मेरा मरुधर है॥

जिसके वैभव की वीर कथा, नर रत्न 'नरोत्तम' गाते हैं।
जिन साको की स्मृतियो से 'हारीत' हरे हो जाते हैं ॥

उस वीर वसुन्धर मरुधर का मैं भी पगला सा प्रानी हू।
गाता हू गीत गये दिन के मैं भी तो राजस्थानी हू।



राणा का विक्रम बोल उठा



उस जीवन की वह सन्धया थी,
सूरज ढलता सा जाता था।
पच्छिम की पीली आभा पर,
काला तम चढ़ता आता था॥

नीले विषाद से भरे हुए,
बादल जुड़ते से आते थे।
देखा था दुखी विहंगम दल,
रो रो कर व्यथा सुनाते थे॥

राणाजी निकट उदयपुर के, सोये हैं एक अटारी में।
आंखें उलझीं हैं एक तरफ, खूंटी पर टंगी कटारी में॥

जिसको भुज दण्डों पर धर कर, नित खून पिला कर पाला था।
इक ओर खड़ा खूंखार वही कोने में भीषण भाला था॥

राणा की स्मृतियां जागीं, रंगीन पुराने परदों में।
अपने को पाया आज पुनः, मरुधर के मानी मरदों में॥

मानो हर हर का विजय गीत, फिर गूंज गया मैदानों में।
मेवाड़ी धरती धूज उठी, तलवारें तड़पीं म्यानों में॥

राणा का अमर अश्व 'चेतक', जंजीर चबाये जाता था।
मानो लोहे के चने चबा, नस नस में जोश जगाता था॥

भाला नभ में उठ भलक उठा, कवचों की कड़ियां झमक उठीं।
देखे बीसों हज्जार वीर, राणा की आंखे चमक उठीं॥

बोले-बप्पा के वंशज हम, चित्तौड़ चिता के चिनगारे ।
इस रक्त भुगती ताण्डव या को, हम हैं प्रलय के अंगारे ॥

हम घुमड़ घुमड़ कर बरसेंगे, हम चमक चमक कर चटकेंगे ।
आओ मुट्ठी में बिजली भर, म्लेच्छों के ऊपर पटकेंगे ॥

फरकी मेवाड़ी लाल ध्वजा, सब ने फिर जय जय कार किया ।
माँ ने आशीषें बरसाईं, सब सतियों ने शृंगार किया ॥

वीरों ने अपनी बहनों से, शुभ रक्षा बन्धन बंधवाये ।
बहुओं ने भर भर कर आंखें, फिर गीत विदाई के गाये ॥

उद्देश्य सुनाया राणा ने, स्वाधीन मेरा मेवाड़ रहे ।
यह लाज ध्वजा, माँ का मन्दिर, प्रभु का अचल पहाड़ रहे ॥

चारण बिरुदावलियां गाओ, दुगुन उत्साह बढा दो तुम ।
मर्द ! मूंछों में बल भर दो, रणसींगे ! रंग चढ़ादो तुम ॥

फुंकारें करती क्रोध भरी, नागिनियां नालों से निकलीं ।
मानो मतवालों की टोली, हल्दीघाटी की तरफ चलीं ॥

सागर सा उफना आता था, बीहड़ वन में भारी दव सा ।
पग पग पर चाव चढा मानो, मरना भी एक महोत्सव था ॥

देखी राणा ने आज वही, घोडो से घाटी पटी हुई ।
देखी राणा ने आज वही, अनगिनती सेना डटी हुई ॥

देखा सुग्रीव सहोदर को, देखी उसकी शैतानी को ।
देखा अम्बारी में बैठा, उस मानसिंह अभिमानी को ॥

फिर तो तन तन में आग लगी, नस नस ने बदला बोल दिया ।
उडते चेतक को एड लगा, भाला मुट्ठी में तोल लिया ॥

किसको प्राणों से प्रेम न था, जो इस ज्वाला में झोंक सके ।
किसको हिम्मत होती इतनी, जो रुष्ट काल को रोक सके ॥

ओ मान ! कृतघ्नी मान ! ! आज, छिपनेमें कुशल तुम्हारी है ।
छिपजा कायर ! ! राणा प्रताप, खाडे का खरा खिलाडी है ॥

योद्धा है पक्के प्रण वाला, वह असली राजस्थानी है।
इसके रों रों में देश प्रेम, व स्वाभिमान का पानी है॥

हटजा हाथी को दूर हांक, रेशम के लच्छे पकड़ वहाँ।
जा चाट-चरण दिल्लीश्वर के, खाला के आगे अकड़ वहाँ॥

यहां तो भाले भलका करते, तलवारें छपका करती हैं।
मस्तक से लाल लाल बूंदें, मणियां सी टपका करती हैं॥

शोणित की रोली घोल यहां, वीरों की होती होली है।
खेलेगा फाग वही जिसने, जीवन से मृत्यु तोली है॥

अच्छा आँखों से देख जरा, अकबर को कथा सुनावेगा।
डर मत तेरे काले मुँह पर, शायद ही शस्त्र उठावेगा॥

पर आंखें अम्बारी पर थीं, भाला मानू की छाती पर।
तन का बल भर कर मुट्ठी में, बरसावेगा कुलघाती पर॥

चेतक भी चतुर खिलाड़ी था, कितने खेतों में खेला था।
राणा के तनिक इशारे पर, अब दल में बढा अकेला था॥

इस तरफ बना दी सेना को, लोहित भीलों के लट्ठों ने।
उन श्याम शिलाओं को शोणित में, परिणित कर दी पट्ठों ने॥

उस तरफ उछलता वीर अश्व, चेतक आंधी सा छूट पड़ा।
हाथी पर दोनों टाप टिकीं, भाला बिजली सा टूट पड़ा॥

रवि का रथ थमा, छिपी जमुना, गंगा की गोदी में डर कर।
सागर पल भर को स्तब्ध हुआ, प्रलयंकारी भय से भर कर॥

दिग्गज कानों से नयन मूंद, दांतों से धरा पकड़ करके।
पांवों पर जोर जमाते हैं, सूंडों से सूंड जकड़ करके॥

सर्पेन्द्र सिमट कर बैठ गया, जिव्हा की लप लप बंद हुई।
मद छूटा मंद पवन में मिल, सुर मण्डल तक को गन्ध गई॥

ब्रह्मा ने झट पट कमल पकड़, माला से मस्तक कसवाये।
डर है जम धरी झपाटे से, यह धरा कहीं ना धंस जाये॥

जितनी जल्दी से पवन पूत, पर्वत ले उडकर आया था ।
जितनी जल्दी जगदीश्वर ने, सागर मे चक्र चलाया था ॥

झपटे, क्षण भी न लगी, लेकिन, राणा किंचित से चूक गये ।
मानू औंधे मुह कूद गया, अम्बारी के दो टूक हुए ॥

सोये थे, झिझके, करवट ली, माथे पर भरा पसीना है ।
मुह से बरबस ही निकल गया यह भी क्या कोई जीना है?

मैं हार चला तुम जीत गये, ओ ! मान ! मुग्ध हो देख मुझे ।
पर, इच्छा थी चेतक पर चढ, कुछ खेल दिखाता आज तुझे॥

मेरा यह मान ! मरण साथी, चुप चाप खडा है कोने मे ।
दोधारी लाल कटारी यह, दिनरात बिताती रोने मे ॥

चन्द्रावत बूढे सेनानी ! कर स्मरण तेरे उपकारो को ।
नत मस्तक करता नमस्कार, माँ के प्यारे भूझारो को ॥

भामा भया ! मेवाडपूत !! हे त्याग वीर !! तुम भी आओ ।
मा के हित बने भिखारी को, ओ चारण! वीर कथा गाओ!!

भामा ने चादी बरसाई । मैंने भी लोहा बरसाया ।
वह तो माँ, तुझ से उऋण हुआ, पर मैं प्रताप क्या कर पाया??

धिक्कार सभी साथी कटवा, घायल हो घर मे लेटा हू ।
है शम मुझे हे सरदारो, मैं भी उस माँ का बेटा हू ॥

मुझ को क्या कहती हैं देखो, वह देव धरा उन राणो की ।
जिसकी रक्षा को पथा ने आहुतियां दी थी प्राणों की ॥

मैं देख रहा हूँ आंखों से, महलों मे म्लेच्छ विचरते हैं ।
माँ की छाती पर खडे आज लोहे के चाने दलते हैं ॥

है धूल धूल इस बेटे को, जो देखे कम कमीने का ।
फटजा फटजा मैं मर जाऊ, ओ घाव ! कृतघ्नी सीने का ॥

इच्छा है शय्या छोड अगर, दो चार कदम भी चल पाऊ ।
चितोड चिता की आग दूढ, जननी के आगे जल जाऊ ॥

बेबसी निराशा से मन्थित, वह वीर विकलता सह न सका ।
आवेश बढ़ा वह गद्गद था, जो मन में थी वह कह न सका ॥

रोमावलियों में तनिक सिहर, झलकाए रंग जवानी के ।
आरक्त नेत्र कुछ और खुले, भर गये व्यथा के पानी से ॥

देखा महाराणा ने मुड़ कर, सहमे से सरदार खड़े ।
देखा इस तरफ व्यथा विव्हल, अम्मर युवराज कुमार खड़े ॥

दो नेत्र मिले दो नेत्रों स, चारों मिलते ही चमक उठे ।
ढलते सूरज, उगते रवि से, उज्जवल मुख मंडल दमक उठे॥

उन दो नेत्रों का खून उबल, उन दो नेत्रों में खौल उठा ।
महाराणा का विक्रम मानो, अम्मर के मुख से बोल उठा ॥

—: जय राणा :—

विडम्बना

थी देवो की सी दिव्य धरा, जननी थी वीर जवानों की।
उन लाल दिनो में दिल्ली यह, पटरानी थी चौहानों की ॥

इसका सौभाग्य सुधाकर वह, पीथल बांके भुज वाला था।
जिसने रजपूती के रग को, लाडो से सीच निकाला था॥

जिसके शूरो सामन्तो में, मरने का मोद उबलता था।
जिसका कमास अकेला हो, कर्नाटक देश कुचलता था॥

जिसके चम्पत व चू डा की, तलवारें तनिक निकलती थी।
मुर्दों के ढेर लगाती थी, शोणित की सरिता चलती थी ॥

जिसका दरबार दमकता था, सोने के उन्नत आसन से।
जिस पर तपते थे पृथ्वीराज, तेजस्वी तरुण हुताशन से॥

जिसके सम्मुख हजारो ही, सरदार सलामी करते थे।
जिसकी नस नस में बरदाई, कवि च द वीरता भरते थे ॥

घावो के दो चि ह न थे, उसकी मर्दानी छाती थी।
मजबूत शिला सी कविता सुन, गज भर चौडी हो जाती थी॥

मोटे मासल दोनो क धे, बाहे घुटनो तक आती थी।
रतनारे नेत्रों के नीचे, तब मू छ मरोडे खाती थी ॥

जिसके झलमलते महलों में, नव रूप महकता रहता था।
पीथल की उन परियों का दल, दिन रात चहकता रहता था॥

मोती से महलों की पंक्ति, सुर पुर से क्या कुछ कमती थी ?
हर आंगन में सुरबाला सी रजपूत रमणियाँ रमती थीं॥

पेशावर से पद्मावत आ, पीथल की सेज बिछाती थी।
सिंहल, पूगल कर्नाटक की, पद्मिनियां पांव दबाती थीं।

दो-एक नहीं, दस बीस, नहीं, ऐसी बत्तीस बिजलियां थी।
सरला थी, सहज रसीली थी, वे कल्पलता की कलियां थीं॥

वे वीर व्रता थीं, धीर व्रता, वे ओज भरी क्षत्राणी थीं।
वे वीर प्रसविनी वनिता थीं, वे सब तलवार खिराणी थीं॥

वे रिम झिम करती वहुएं थीं, वे विरुदावलियां गाती थीं।
तलवार कमर में कसती थीं, प्रीतम को स्वय सजाती थीं॥

उस रंग रंगीले जोवन में, तब कैसी जोर जवानी थी।
अपने उन शेर सपूतों पर उस दिन दिल्ली दीवानी थी॥

दीवानी थी लासानी थी प्यारे पीथल की रानी थी।
सोती तलवारों की छाया कैसी मीठी मस्तानी थी॥

मस्तानी में नादानी में चिनगारी चुप से फूट पडी।
धागे में बंधी लटकती थी, तलवार अचानक टूट पड़ी॥

जिस रोज सुन्दरी संयुक्ता बिजली बन घर में आई थी।
उस रोज मुहम्मद गोरी ने बांटी वहाँ विजय बधाई थी॥

संयुक्ता सरला हरिणी थी, हँसती तो फूल बरसते थे।
उसकी चपलासी चितवन को कितने युवराज तरसते थे॥

पृथ्वी ने उसका नाम सुना या प्रणय पुराना जाग गया।
चुप चाप कहीं से आ पहुँचा, संयुक्ता को ले भाग गया॥

माला के मजुल मुक्ता ये सीपी की नाश निशानी है ।
संरघ्रो की सुन्दरता ही कौरव की करुण कहानी है ॥

जो द्वेष घोर जयचद में था उसने ज्वाला उपजाई थी ।
दिल्ली में आग लगाने वह सयुक्ता वन कर आई थी ॥

भाई जीवन भर नही मिले, तलवार मिलावेंगी उनको ।
मरने से पहले गरम गरम वे खून पिलावेंगी उनको ॥

गौरी !! आजा अब तूने भी बदले का मौका पाया है ।
ओ! घर की फूट!! नाच नगी अबनाश निकट चल आया है ॥

यह कमल कुसुम यो हसा करें मेढक दल कब सह सकता है ।
अन्धड के आगे पका आम न झडे कहा रह सकता है ।

धोखा या धरती पलट गई पत्थर ने पहिया पकड लिया ।
मौके पर यवनो ने आकर बब्बर को जबरन जकड लिया ॥

उजडे घर की इस दुर्दिन की हा! कितनी करुण कहानी थी ।
पर,वीर प्रवर पर भीम व्यथा की किंचित् नही निशानी थी॥

देखा दुनिया ने भली तरह वे भीष्म बने गभीर रहे ।
है धन्य हृदय की शक्ति को इस दुख मे ध्रुव से धीर रहे ॥

दो लाल दलाकाए भाई – दो अगारे भी चमक उठे ।
इस तरफ इशारा तनिक हुआ उस तरफ हथकडे झमक उठे॥

इम पलक छनन का शब्द हुआ उस पलक विजलिया तडक गई।
दो दिन की थमी हुई दुनिया दो क्षण भर में ही तडक गई ॥

जो बिम्ब उतर कर आया था वह पुन अमर वकुण्ठ गया ।
जो वैभव भरा भवन में था दुर्दैव लुटेरा लूट गया ॥

जिसकी ज्योति मे जीते थे वह हीरा कर से छूट गया ।
जो चाद गगन में हँसता था उस रोज अचानक टूट गया ॥

पल भर में कितना परिवर्तन;; कहने का मतलब मेरा है ।
शेरों के बीहड़ जंगल में दुर्बल गीदड़ का डेरा है ।।

नियति की निर्दय लीला की यह क्यों मन चाही मस्ती है ??
पाषाणी मानव पीथल की केवल इतनी सी हस्ती है ???

दुर्दिन के एक झपाटे में दंगल सम्राटो शूरों का ।
यह दिल्ली वन कर महक उठी मय खाना हरमी हूरों का ।।

यह शयनालय की सुन्दरि हो पुतली वन नाज नजाकत की ।
मधु पी कर भोली भूल गई कीमत मर्दानी ताकत की ।।

यह कलह फूट का फर्सा ले जब जब हुँकारें भरती है ।
जगल जलने लग जाता है नगरों को निर्जन करती है ।।

यवनों की माया फैली थी वह भी क्षण भर मे क्षीण हुई ।
लचकीली रूप भरी दिल्ली आँखों के आगे दीन हुई ।।

अफसोस नहीं उस रोज हमारा आर्यावत का ताज गया ।
दिल्लीश्वर अंतिम वादशाह राजेश्वर पृथ्वी राज गया ।।

परवाह नहीं रजपूतनियां अपनी इज्जत के लिए लड़ीं ।
कुछ शोक नही है आज हमे वे जो जौहर मे कूद पड़ी ।।

गगा की वहती धारा में कितने तृण वहते जाते हैं ।
नक्षत्र हजारों गिरते हैं किस की नजरों में आते हैं ।।

पर चन्दा की ज्यों चमक चमक घुल घुल कर मिटते जाते हैं ।
उनकी ही अमर कहानी को गर्वीले कवि जन गाते हैं ।।

वह किला गया, वह कोट गया, वे तोपें, तीर कमान गये ।
वे वीर व्रती, वे घीर व्रती, वे लाखों जोध जवान गये ।।

वह रूप गया कुछ दुःख नही वह जोश गया तो जाने दो ।
हम को वस उनके गीत मिलें, हँम हंस कर हम को गाने दो।।



मेरे आराध्य

जिनका जीवन मुझ को विस्मित कर देता है,
उनकी जीवन रेखाओ मे रङ्ग भरता हू ।
जो होते आराध्य, पूज्य, प्रेमी मेरे,
उनको ही अपने शब्द समर्पित करता हू ।

मैंने गाये हैं गीत अवध के आंगन के,
है सदा सराहा भाग्य यशोदा मया का।
मैं शेर शिवा राणा प्रताप पर बलिहारी,
हू भक्त महात्यागी उस भामा भया का।

बापू पटेल के गुण गौरव का गायक हू,
चाचा नेहरु का मन्त्र सदा जपता हू ।
मेरे विशाल भारत के इन सत्पुरुषो को,
इस तपोभूमि मे काव्य तपस्या तपता हू ।

मेरी पूजा के फूल वहीं पर चढते हैं,
जहा परस्पर प्यार महकता रहता है ।
वह घर मेरे भगवान का मन्दिर होता है,
जहा प्यार भरा परिवार चहकता रहता है ।

मैं झुक झुक कर उन चरणों को चूमा करता,
जो चरण नया निर्माण किया करते हैं।
मेरी श्रद्धा के सुमन उन्हीं को अर्पित हैं,
जो हस कर विष की घूट पिया करते हैं।

× × ×

मेरे आराध्य है शपथ मुझे इन चरणों की,
है आन आपके भाले और कटारी की,
इस मातृभूमि का कण कण मेरा सिर होगा,
है अटल प्रतिज्ञा माँ के तुच्छ पुजारी की ।

युग पहुँच रहा है चाँद सितारों से आगे,
सब बदल गये है मूल्य मान अब मानव के,
पर मै तो छोड़ न पाया प्रेम पुरातन का,
चिपके बैठा हूं उसी सनातन वैभव से ।

सचमुच, इस युग के महल मन्दिरों के आगे,
उन अमरों की बस्ती को फीकी पाता हूं,
फिर भी इस खण्डहर की बासी बातों को,
यदि आज्ञा हो तो पुनः आज दोहराता हूं ।



माँ का मान बढ़ायेंगे

लो उधर आ रहा सूरज ऊचा नव किरणो का हार सजा,
लो उधर मुक्त मेघो से मिल फर फर फहराइ विजय ध्वजा।
वह ऊपर देखो झूमझूम फूलो की लडिया लहराई,
स्वर्गीय शहीदो ने शायद 'मा' को मालाए पहनाई।

माँ देख आज अपने घर को अपने लालो से भरा हुआ,
मा देख सिंहासन के ऊपर ज्योतिमय दीपक धरा हुआ।
इसकी आभा मे देखो मा ओजस्वी उज्जवल हीरो को,
यह अवसर याद दिलाता है अपने उन बाके वीरों को।

पद्मा मेवाडी महारानी क्षत्राणी अनुपम नारी थी,
शाही वभव से अधिक जिसे भारत की गरिमा प्यारी थी।
गाती मा तेरी महिमा को अग्नि मे अन्तर्धान हुई,
दिल्लीश्वर मत्था फोड मरा वह मुक्ति की मेहमान हुई।

राणा माँ तेरा अमर पूत रजपूत भरोसे भाले के,
खा खा कर सूखी घास लिया, लोहा उस दिल्ली वाले से।
झुक गई धरा नभ झुका कहीं पर शीशोदी सिर झुका नहीं,
घाटी की घटना कहती है वह चचल चेतक रुका नहीं।

वह पट्ठा वीर मरट्ठा जो स्वामी समर्थ का चेला था,
माँ तेरे बन्धन मुक्त करू यों कह कर बढा अकेला था।
तोपों ने उगली आग उधर फुत्कार वो काले नाग चले,
डस गई इसानी लासानी मक्कार मदोने भाग चले।

सुन माँ की जय जय कार हुई, तैयार नई तरुणाई थी,
पद्मा के जौहर की ज्वाला अब तलक न बुझने पाई थी।
सगीन झेल कर सीने पर जिसने धरती दहलाई थी,
तेरी माला की लाल मणी लाडेसर लक्ष्मी बाई थी।

॥ सात युगों के बाद पुन बुझती चिनगारी चमक उठी,
जलियाँ जौहर की वह ज्वाला हर तरफ देश मे दमक उठी।
बढ चले देश के नौनिहाल झुक चली जमातें गोधो की,
पन्ने के अन्तर मे देखो स्मृतियाँ उन बाल शहीदों की।

अनगिनती हीरे हरण हुए मोती मालाएं नष्ट हुईं,
इस पावन धरती की पुत्री कोमल कलिकाएं भ्रष्ट हुईं ।
पर भीषण अन्धड़ उमड़ चला उनकी तोपों से रुका नहीं,
उठ बैठा कर के जो हुंकार भारत किंचित् भी झुका नहीं ।

प्राची की पर्वत सीमा पर उस रोज नई झंकार सुनी,
बढ चलो बहादुर दिल्ली को, नेताजी की ललकार सुनी ।
खा गया हिन्द होशियारी से यह गहराई का गोता था,
सेवाश्रम का वह वृद्ध संत स्वातन्त्र्य यज्ञ का होता था ।

भारत छोडो महामानव ने पूर्णाहुति में यह मन्त्र दिया,
सन् संतालिस पंद्रह अगस्त को अपना देश स्वतन्त्र किया ।
इस महा मोल में मिले हुये अनमोल रत्न को रक्खेंगे,
बापू ने बाग लगाया है इसके मीठे फल चक्खेंगे ।

सौगन्ध तिरंगे की तुम को यदि इसका मान घटाया तो,
थूकेगी दुनिया हम पर यदि उन वीरों को बिसराया तो ।
रामेश्वर द्वारिका तक्षशिला काशी बद्रीश्वर प्यारा है,
गौरी शंकर पर्वत से ले सागर तक देश हमारा है ।

इसकी धरती पर तना हुआ सारा आकाश हमारा है,
इसके सूरज व चन्दा का सब पुण्य प्रकाश हमारा है ।
इसके सुरभीले स्वर्ग देख जिसकी आंखें ललचावेंगी,
उसकी सोने की लंका भी क्षण भर में ही जल जावेगी ।

आंखों के आगे वीर प्रसू पांचाली का पट फाट गया,
पीले मुंह का परदेशी आ बंगाल बीच से काट गया ।
यह भी लोहू का घूंट पिया सह लिया किन्तु अब सहें नहीं,
अपनी केशरिया धरती से हम दूर कहीं भी रहें नहीं ।

चितौड चिता हल्दी घाटी हे सोमनाथ के सिंह द्वार,
हम में भी वह विक्रम भर दो हे सिक्ख शहीदों के द्वार,
अपनी धरती के सभी पुत्र हम एक सूत्र में बंध जायें,
इस पुण्य पर्व पर मुक्त कण्ठ से यही प्रतिज्ञा दोहराएं,

मां का मान बढायेंगे ।

जागो साँची के स्तूप

गंगा के निर्मल जल वाले, उजली पर्वत माला वाले,
सूरज शशि के कुण्डल पहने, सागर की मृग छाला वाले,
जड़ चेतन मे व्यापक वाणी वेदों के सद सूत्रो वाले,
भारत, शिव, सत्य हरिश्चन्द्र गौतम जैसे पुत्रो वाले,

मेरे भारत ! माँ के मन्दिर कितना ऊचा तेरा दर्शन,
जीवन मृत्यु सुख दुःख विषयक, कितना तेरा गहरा चिंतन,
'सर्वे भवन्तु सुखिन" कह कर तुमने सबको सुख दान दिया,
समदर्शी पण्डित का स्वरूप, बतला सबका सम्मान किया।

वैदिक युग का वह विशद ज्ञान, धीरे धीरे कुछ म्लान हुआ,
पाखण्ड प्रपंचो मे पड़कर वह अमृत अंतर्धान हुआ,
सच्चा स्वरूप था बदल चला व्यापक विधान थे भटक गये,
आदर्शों मे उन्माद भरा वे लक्ष्य अधर मे अटक गये।

यह था समाज या राज कि जिसने सारे मन्त्र बदल डाले,
समता सूचक सुख दायक वे व्यापक तन्त्र बदल डाले,
आत्मोन्नति का अधिकार मिला धन साध्य सुलभ उपकरणो को,
विद्या विवेक व कला मिली उन्नत अधिकारी वर्णों को।

रोटी टुकड़ों में टूट गई भूमण्डल मानो बिखर गया,
एकोऽहं का स्वर मौन हुआ गूंजा कोलाहल नित्य नया
मानवता पिंजड़ों में जकड़ी और भूल चली अपनपन को,
भौतिक चमक व जादू ने बहकाया मानो जन मन को।

गमार सुनहला नदन वन इस का मिथ्या कहने वाले,
इस हरी भरी महफिल में भी उजड़ उदास रहने वाले,
खाने पीने में ठाट बाट, कहने सुनने में भी सयम,
य छोट मोट मुण्ड माड़े बस दया दया बकते हरदम।

समता ने सत्यानाश किया, क्या घोड़े गधे बरावर हैं?
कितने ऊंचे हैं ये पहाड़, कितने नीचे ये सागर है?
इस दया अहिंसा करुणा ने, कायरता भर दी वीरो में,
जहां जोत जगी सी रहती थी, वहां राख रमी है हीरो मे।

यह नया जमाना बोल उठा अब नये शास्त्र के सूत्रो में,
यज्ञो की युद्धों की लिप्सा जागी पृथ्वी के पुत्रों में,
धन ने धर्मों को मोल लिया, प्रतिभा प्रपञ्च में उलझ गई,
यह जीव जीव का भोजन है खोजी वेदों में बात नई।

गगा के तट पर मीलों तक खूंटों की कई कतारे थी,
विधि से बांधे पशु बलि होते, विधि से पूजी तलवारे थी।
इस विधि में वध की भीम व्यथा जिसमें भोजन का घृणित स्वाद,
जिसमें स्वाहा का अट्टहास, जिसमें प्राणों का आर्तनाद।

इस जंत्र मंत्र इस जातिवाद, इन ऊंच नीच के घेरों में,
सीमित पृथ्वी सीमित प्रदेश विद्वेप घृणा के डेरों में,
एक नई जोत, एक नया स्रोत, एक नया भाव संचार हुआ,
श्री शुद्धोधन के आंगन में एक नया मनुज अवतार हुआ।

वह रूपवान सुन्दर जवान, वह शीलवान साकार काम,
पर उसको लुभा नही पाये उस कपिलवस्तु के दिव्य धाम,
वैभव हारा जीता विराग छिटकाये सब स्वर्गिक सुख भी,
जिनको छोडा बस छोड़ चले मुड़ कर न कभी देखा मुख भी।

जब न्याय निकम्मे होते है पाखण्ड धरा पर पलते है,
शूलो को फूल बनाने तब ये चरण जमी पर चलते है,
वह सौम्य शान्त दुबला साधु फक्कड़ भिक्षुक दो रोटी का,
कम्मर मे केवल पहने था दो गज भर पूर लगोटी का।

+ + + +

अच्छा सोचो अच्छा बोलो अच्छा करने मे लगे रहो,
बहुजन हिताय बहुजन सुखाय इस मध्य मार्ग पर लगे रहो,
समता पालो क्षमता रखो मृदुता सेवा से सने रहो
पल पल परिवर्तित जीवन मे, करुणा मय कोमल बने रहो।

जब बुद्धदेव को बोध मिला सुरसरी मिल गई भारत को
इस शांति दूत का सग मिला अवतार मिल गया भारत को,
तिब्बत लका जापान चीन वह हुआ व्याप्त सब वर्णों में,
झुक गये शीश सम्राटो के उस भिक्षुराज के चरणो मे।

पर यह प्रवाह भी पुलिन छोड़ बह गया धरा से दूर कही,
बुद्ध शरण गच्छामि का वह घाव हुआ चकचूर कही,
अस्त्रो शस्त्रो की दौड लगी अणु म उदजन की होड चली,
इन महा नाश की घडियो में मानवता निज पथ छोड चली।

जागो हज्जारो वर्ष बाद भारत में स्वर्णिम थाल बजा,
महा मानव का अवतार हुआ माँ का फिर तोरण द्वार सजा,
जय शान्ति शक्ति जय मान मुक्ति जय सजना सफला दिव्य धरा,
जागा माचो क स्तूप जगो है बोध गया।

ग्रहयोग

पृथ्वी, रवि,शशि,बुध,शुक्र,शनि,मंगल वरुणादिक वहुत वने ।
अपना अपना अस्तित्व लिए, चलते चक्कर में स्नेह सने ॥

उनमें अपनी मर्यादायें, उनमे अपने सीमित साधन ।
उनमें अपनी गति विधियां हैं, उनमे अपना प्रभु आराधन ॥

जो जितने ऊंचे स्थित है वे उतने ही उन्नत दिल वाले ।
उनकी दृष्टि मे है समान, उजले नीले पीले काले ॥

सूरज सतरगी किरणों से, कण कण मे जीवन भरता है ।
धरती से लेकर अम्बर तक, नव दृश्य उपस्थित करता है ॥

रजनी के झिलमिल आचल में, जव चन्द्र वदन मुस्काता है ।
तमसावृत जग के मानस में, उल्लास उफनता आता है ॥

यों गरम नरम उजली आभा, इन सौर सपूतों से पाकर ।
यह धरा वनी वसुधा पावन, रमणीक वने है रत्नाकर ॥

यह मगलमय ग्रह मडल तो, धरती के सौम्य सहोदर है ।
अपने वल वैभव के स्तर से, कुछ नीचे हैं कुछ ऊपर हैं ॥

ये नियमित है ये सयत है, इनसे इतना भय भरना क्यों ?
जव मामा दो पल मिलते है तो इस मिलने से डरना क्यों ?

ग्रह-मडल से डरने वाले, तत्वों का तनिक खयाल करे ।
जीवन का सार समझने को, नौ * पेडी तक नीचे उतरे ॥

सीता जैसी सतवन्ती जो, राजा राघव की महारानी ।
जो रह न सकी अपने घर में, वो पी न सकी सुख से पानी ॥

महावीर प्रभु के चरणों मे, कितनी लावण्य लुनाई थी ।
उन कमलों की शुचि सौरभ ले, इस महि ने महिमा पाई थी ॥

उन सुखदाई के चरणों मे एक शठ ने आग जलाई थी ।
उस अनुपम चूल्हे पर उस ने मन भाई खीर पकाई थी ॥

---

* जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, सवर, निर्जरा, वन्ध और मोक्ष ।

वे सौम्य सहोदर हलधर के, श्रीगज सुक माल परम प्यारे ।
जिन के मखमल से मस्तक पर धर दिये धधकते अगारे ॥

वह सत्य अहिंसा का साधक आराधक था आजादी का ।
कम्मर में केवल रखता था, एक पूर अधूरा खादी का ॥

महावीर बुद्ध के बाद यहा कहो ऐसा मसीहा कौन हुआ ?
उस के भी गोली तीन लगी हे ! राम, कहा फिर मौन हुआ ॥

हम देख रहे हैं दूर तलक इन इतिहासो की कड़ियो को ।
उत्थान पतन को लिए हुए इन घटनाओ की लड़ियो को ॥

इन में सयोग लगा है क्या इन ग्रह मडल की बातो का ।
ये विश्व विहित दुघटनाए क्या उत्तर देंगी इन बातो का ॥

यह जीव ज म ज मान्तर से जाने क्या क्या करता आया ।
उत्तम मध्यम जो किया गया उस से यह घट भरता आया ॥

जैसी करनी वैसी भरनी यह सार सभी के साथ रहा ।
अपने को कैसा बना सके यह तो अपने ही हाथ रहा ॥

यदि शुभ करणी सजोग हुए पथ के टीले टल जाएगे ।
पावक पानी बन जायेगी, ग्रह मडल भी गल जाएगे ॥

अच्छा सोचें अच्छा बोलें अच्छा ही नित व्यवहार करें ।
हम सरल स्नेही जीवन मे, मुस्कानो की महकार भरें ॥

यह व्यग्य विषैला काटा है इस को वाणी से दूर करें ।
यह क्रोध गजब का गोला है धर दूर कही चकचूर करें ॥

सयम से स्नेह बढ़ालें तो यह सोना सुरभित हो जाये ।
फिर कुटिल कल्पनातीत काम का कुभकरण भी सो जाये ॥

सोम सूय मगल इत्यादिक अपना ही परिवार है ।
ये हैं पार्थिव पिण्ड प्रत डरने की क्या दरकार है ?

डर तो उन षड रिपुओ का है जो घट घट मे घुस आये हैं ।
कितनी द्रौपदिया दलित हुईं कितने ही दीप बुझाये हैं ॥

पच महाव्रत पच कुड मे काम क्रोध को दहन करें ।
स्नेह शांति समता सरसाने आओ शाश्वत हवन करें ॥



संध्या स्वागत

हे संध्या के दीपक तुम्हें प्रणाम है—

सांझ हुई, दिन ढ़लिया, तारे छा गये,
दूर दिशा से उड़कर पंछी आ गये,
सूरज ने भी लिया कहीं विश्राम है।
हे संध्या के दीपक तुम्हें प्रणाम है॥ १॥

स्नेह शान्ति से सजा हुआ संसार है,
मणि माणिक से भरा हुआ भंडार है,
मिठ बोलों का मुखड़ा सदा ललाम है।
हे संध्या के दीपक तुम्हें प्रणाम है॥ २॥

बांधें वन्दनवार सुरंगी पोलियां,
रिम झिम करती वह वेऱ्यां की टोळियां,
चंचल चूनड का अंचल अभिराम है।
हे संध्या के दीपक तुम्हें प्रणाम है॥ ३॥

जागो जग मग दीप हमारे प्यार के,
सींचेंगी हम तुम्हें स्नेह की धार से,
हर आंगन की सदा सुहानी शाम है,
हे संध्या के दीपक तुम्हें प्रणाम है॥ ४॥

घर कूचा घर मजला

जब न्याय निकम्मे होते हैं, पाखण्ड धरा पर पलते हैं।
शूलों को फूल बनाने तब, ये चरण जमीं पर चलते हैं॥
घर कूचा घर मजला ये चढ़ते बढ़ते चरण चले।
साँझ हुई तो ठहर गये और भोर हुआ फिर वह निकले॥

अपना बोझ उठा काँधे,
लक्ष्य कहीं लम्बा बाँधे,
घोर घनी गिरती शरदी,
आग बनी धधके धरती,

पर रुके नहीं, झुके नहीं, तूफानों में दीप जले॥

ये मंगल महल लुभा न सके,
ये वृद्ध बड़े बहला न सके,
माँ बहनों के उमड़े आँसू,
इनको किंचित् पिघला न सके,

ना कोई मोह ना कोई द्रोह पग मोड़ेंगे कहीं छाँह तले॥

तुम कमल विमल हम सरवर हैं,
तुम सुमन सजल, हम तरुवर हैं,
तुम रवि शशि हो, हम धन्य धरा,
जिस पर तव ज्योति चरण उतरा,

फिर योग कहा औ वियोग कहा ? युग युग तक पावन प्यार पले॥

विनम्र अनुरोध—

मानता हूं देव ! यह जेठ की प्रचण्ड धूप,
धोरों वाली धरा पर धूनी सी धुकाती है ।
जानता हूं देव ! इन चरणों की चारुता को,
छूने में जिन्हे यह भू स्वय सकुचाती है ।
देखता हूं नित्य भाई बहनो की हजारो आँख,
दर्शन सुधा मे जो कभी भी न अघाती है ।
तो भी सेवा स्वाति की हो प्यासी हे आनन्द घन,
चूरू बनी चातकी पुकारे दिन राती है ॥१॥ (तु

भरे हुए अञ्जली में भावों के सुरंगे फूल,
विज्ञजन विधिवत् विनती उचारते ।
प्रभु के प्रसाद से ये सज्जन सुजान, ऐसी,
लाभ वाली होड में हमेशा बाजी मारते ।
किन्तु मेरे प्रभु का है शासन समानता का,
राजा और रक पे समान ध्यान धारते ।
हाथियों को मण यदि देना है तो देते, पर,
कीड़ी वाले कण को भी चित्त से न टारते ॥२॥ (ल

वग व विहार के अनन्त व असख्य पथ,
कीचड व कंकरो से भरे इतराते है ।
उत्तरी प्रदेश व पंजाब के निराले क्षेत्र,
देखो जहाँ नदी और नाले बल खाते हैं ।
खडे हैं पहाड वे दहाड़ सुने शेरों की जो,
ऐसे उस मेवाड मे आ अलख जगाते हैं ।
शवरी के बेर या अहिल्या के उद्धार हेतु,
आप के ये चरण बढे ही चले आते हैं । (सो

आचार्य श्री तुलसीगणी उन दिनो बीदासर विराजते थे । चूरू से अनेक ...जन, आचार्य श्री से चूरू पधारने की प्रार्थना लेकर बीदासर गये थे । विहारी ... भी चाहते थे कि चूरू के लोगो को यह लाभ अवश्य प्राप्त हो, इसलिये वे बीदासर पहुँचे और उन्होने वही २१-५-६३ को उपरोक्त छन्दों की रचना ...

गाँधी ही गाँधी गूंज रहा

जग कहता है चले गये हैं जग के वे आधार कहीं।
जाया करते है विरले जहाँ स्वर गंगा के पार कहीं ।।
जावेगा फिर कौन स्वर्ग मे नित बैठा जो स्वर्ग रचे।
जिसमे विश्वभर रहता हो कौन भला बैकुण्ठ रचे ।।

इस विश्व के अंचल में वे शान्त समाधि लेते हैं।
आंखो वालो से पूछो वे हर जगह दिखाई देते हैं ।।
वे दीख रहे हैं आज हमें यमुना की उज्ज्वल झलकों में।
वे मौन मनस्वी बैठे हैं नेहरू की निश्चल पलकों में ।।

सरदार मौन मुख बन्द किये मन ही मन में क्या गुनते हैं ?
अन्तस में बैठे वे अपने बापू की वाणी सुनते हैं ।।
बापूजी अभी विराजे हैं मानो अति मंजुल वाणी मे।
उनकी मंगल ध्वनि गूंज रही है भारत की रजधानी मे ।।

इस तरफ जरा मुड कर देखो लाखो ही लक्ष्मी आती हैं।
अनगिनती आँखें झुक झुक कर मोती माला पहनाती हैं ।।
कैसे मानूं वे चले गये हैं स्वर गंगा के पार कहीं।
जब रोम रोम मे पुलक रहा है उनका उज्ज्वल प्यार यहीं ।।

बापू ही बापू गूंज रहा बच्चो की तुतली बोली मे।
गाँधी ही गाँधी गूंज रहा है गली गली की टोली मे ।।

विश्व वंद्य बापू से-

उनकी ६२वीं वर्ष गांठ पर—

वर्ष हो गये बानवे, हुआ एक अवतार ।
राम कृष्ण गौतम ईसा का शुद्ध रूप साकार ॥
पावन हुआ पोर बंदर व गूंज उठी गुजरात ।
उगा सूर्य पश्चिम में उस दिन, लेकर पुण्य प्रभात ॥
चला सुदर्शन मन मोहन का, हटा कंस का राज ।
जगमग जगमग लगा चमकने, भारत माँ का ताज ॥
उडे तिरंगा मुक्त गगन में,झूम रही जयमाल ।
गरज रहा है लाल किले पर, वीर जवाहरलाल ॥
खादी आजादी समता का लिये हुये सद्भाव ।
सत्य अहिंसा स्वाभिमान व देश भक्ति का चाव ॥
बापू तेरी चरण धूलि में पाता जग विश्राम ।
निर्गुण सुगुण जहां जो हो तुम, लो मेरे प्रणाम ॥

वीर जवाहर

डाक्टर हो या पंडितजी हो, या हो जंगी लाट,
नाहर वीर जवाहर हो, या युवक-हृदय-सम्राट,
कमलेश्वर हो, विजया-बन्धु, इन्दू-पिता अनूप,
तुम नवयुग के निर्माता हो, नव भारत के भूप ।
मिला दुग्ध सा मुग्ध कलेवर, मिला कमल का मेल,
मिली मर्द को मंगल वर सी, निष्ठुर नैनी जेल,
तपा युगों तक तरुण तपस्वी, घुल घुल तपी जवानी,
यही तपोवन कहा करेंगे तेरी अमर कहानी ।
आज स्वयं वसुधा आई है भर कुंकुम का थाल
मुदित हिमालय! झुका तनिक तव सदा सुनहला भाल
अरुण रेख अभिषेक तुम्हारा अभिनन्दन हे आर्य !
मिलें हमें शत वर्ष तलक यह ओज तेज औदार्य !

जैन-धर्म को चूरू जिले की देन

—गोविन्द अग्रवाल

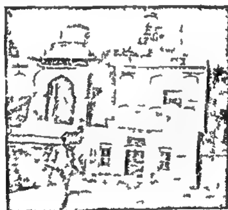
जैन धर्म के विकास, प्रचार और प्रसार में कम से कम एक सहस्राब्दी से चूरू जिले के इस भू-भाग का महत्त्वपूर्ण योग रहा है। इस सम्बन्ध मे प्रकाश की प्रथम किरण हमें चूरू जिले के एक कसबे रिणी (अब तारानगर) से मिलती है। रिणी या रेणी चूरू जिले का एक बहुत प्राचीन नगर है[1]। बीकानेर राज्य के इतिहास मे डा. गौरीशकर हीराचन्द ओझा ने लिखा है – कहते हैं कि इसे राजा रिणीपाल ने कई हजार वर्ष पूर्व बसाया था। उस के अन्तिम वश-धर जसवतसिंह के समय लगातार कई बार अकाल पड़ने से यह नष्ट हो गया। यही बात बीकानेर के अन्य इतिहास ग्रन्थो में भी मिलती है। इसी जसवंत डाहलिये के समय में वि. स. ९९९ में रिणी में जैन मन्दिर का निर्माण हुआ था, जिससे इस सभावना को बल मिलता है कि उक्त संवत् से पूर्व ही इस क्षेत्र में जैन धर्म का प्रभाव था और जैन धर्मावलम्बी यहां बसते थे। मन्दिर निर्माण और जसवन्त डाहलिया के सम्बन्ध मे बीकानेर के ज्ञान-भण्डार के एक पत्र से जानकारी प्राप्त होती है, जो निम्न है –

"सं. ९९९ मिती फागुन बदि १३ बुधवार पाछलै पुहर श्री रिणी मे जैन रो देहरो तिण री नीव दीवी सेठ लखो खेतो लालावत रो करायो बहू गोष्ण बेटी देवै हेमावत री देहरै री सोंप भोजग जैतो देवै रै नुं थी जसै देदावत रो बेटो राज जसवत डाहलियै रो गणेश नीबावत रो राज फोगे देहरै रो भीखो लगावह अहमद बरस मा देहरो प्रमाण चढ्यो देहरो श्री शीतलनाथजी रो तेहनी उत्पत्त जाणवी।"

उपरोक्त पत्र में एक नाम 'फोगा' आया है। फोगां (गाव) चूरू से लगभग १२ कोस उत्तर पश्चिम और इतनी ही दूर रिणी से दक्षिण पश्चिम पडता है। यह नगर भी बहुत प्राचीन है। सम्भव है वहां फोगा नाम की किसी जाति का आधिपत्य रहा हो या तत्कालीन शासक का यह नाम हो। फोगां भी रिणी के साथ ही लगातार अकाल पड़ने से विक्रम की ११वीं शताब्दी के प्रथम चरण मे वीरान हो गया। इस सम्बन्ध में एक बहुप्रचलित जनश्रुति का सार यह है—

1- पाणिनिकालीन भूगोल का विशद विवेचन करते हुए स्व. श्री वासुदेवशरण जी अग्रवाल ने तत्कालीन 'रोणी' के आधुनिक 'रिणी' होने की संभावना व्यक्त की है।

पहले इस नगर का नाम कोयलापट्टन था। यहा शृङ्गी ऋषि का धूना था। एक बार ऋषि ने अपने शिष्य से कहा कि मैं समाधि लगाता हू और जब तक मेरी समाधि न खुले तब तक तुम भिक्षाटन करके अपना निर्वाह करना। यो कह कर ऋषि समाधिस्थ हो गये। बारह वर्ष बाद जब उनकी समाधि टूटी तो उन्होने शिष्य को अत्यन्त कृशकाय देखा। गुरु के पूछने पर शिष्य ने उत्तर दिया कि आजकल यहा जैन धर्म का प्रभाव बहुत बढ गया है और जैन धर्म को अपनाने वाले लोग हमे भिक्षा नही देते। शिष्य की बात सुन कर ऋषि बडे कुपित हुए। उन्होने धूने से जरा सी भस्म ली और मन्त्रोच्चार के साथ रोषपूर्वक भस्म को नगर की ओर फेंकते हुए कहा 'पट्टण पट्टण स डट्टण'। ऋषि के शाप से वहा महाध्वस का दृश्य उपस्थित हो गया, धूल और राख की भयकर वर्षा हुई और नगर उलट गया।



रिणी का प्राचीन जैन मन्दिर अपने वर्तमान रूप में

यद्यपि जन श्रुतियो मे मूल तथ्य बीज रूप से सुरक्षित रहता है कि शताब्दियो - सहस्राब्दियो तक कठाग्र चलते रहने के कारण मूल तथ्यो के स अन्य अनेक बातें भी जुड जाती हैं। यहा भी सभवत ऐसा ही हुआ है। रिर आदि के मन्दिरो के निर्माण से यह तो स्पष्ट है कि दसवो शताब्दी के उत्तरा में यहा जैन धर्म प्रभावशाली था और ११वी शताब्दी के प्रारम्भ में ... तार भयकर दुर्भिक्ष पडे थे। वर्षा न होने से तेज रेतीले तूफानो का च

स्वाभाविक है, फलत: बड़ी संख्या मे मनुष्य तथा पशुपक्षी मरे होगे। ब्राह्मण-धर्म के ह्रास व जैन धर्म के बढते हुए प्रभाव से खीझकर तत्कालीन हिन्दू धर्म के नेताओं ने जैन धर्म के बढते हुए प्रभाव को ही प्रकृति के सारे प्रकोपों का मूल कारण बतला कर प्रचार किया हो, जिसके फलस्वरूप ऐसी जन-श्रुतियां प्रचलित हुई हो। कारण चाहे जो भी रहे हों, लेकिन इन मान्यताओं से यह धारणा पुष्ट होती है कि उस वक्त इस क्षेत्र में जैन धर्म का प्रभाव बढ़ रहा था।

फोगाँ का प्राचीन नाम 'फोग पत्तन'[1] था और संभवत: तब यह एक समृद्धिशाली नगर था। लेकिन जब यह वीरान हो गया तो इस का सारा वैभव भी समाप्त हो गया और जब बहुत समय बाद अपने टूटे फूटे रूप में फिर बसा तो 'फोगपत्तन' के स्थान पर इसका लघुतासूचक नाम "फोगां" ही शेष रह गया[2]। उजडे हुए फोगा के इर्द गिर्द लोग आ आ कर बसने लगे, लेकिन फोगां के ७ वासो मे से ३ आज भी जन-शून्य पडे हैं। इन वासों के 'भरथरी', 'सुगड़वास' आदि नाम इनकी प्राचीनता के द्योतक है और आज भी वहा से प्राचीन अवशेष प्राप्त होते है।

चूंकि कोयलापट्टन एक बहुत प्रसिद्ध नगर था, इसलिए कालान्तर मे लोग इसके असली नाम 'फोग पत्तान' को भुलाकर कोयला पट्टन कहने लगे और वडे बूढे लोग आज भी वैसा ही कहते है। लेकिन वास्तव मे इसका सही नाम फोग पत्तान था और यह जैनधर्म का केन्द्र बन गया था। जैन धर्म की यह परंपरा यहा बाद तक चलती रही। विक्रम की १८वी शताब्दी मे होने वाले खरतर गच्छीय भट्टारक शाखा के सुप्रसिद्ध जैन आचार्य श्री जिन सुखसूरि जी इसी फोग पत्तान के थे।

1- प्राचीनकाल में अनेक नगरों के नामो के साथ 'पत्तन' शब्द जुडा होता था, वाल्मीकि रामायण में 'मुरवी पत्तन' नगर का उल्लेख मिलता है–

मुरवीपत्तनं चैव रम्य चैव जटापुरम्।

किष्किन्धा काण्ड ४२।१३

कबीर की साखियों मे भी 'पत्तन' का उल्लेख हुआ है–

वे पुर पत्तन वे गली, बहुरि न देखै आय।

2 अभी कुछ समय पूर्व श्री देवेन्द्र हाण्डा को फोगा से बलवन, अलाउद्दीन खिलजी आदि के कुछ सिक्के प्राप्त हुए हैं, जिन से इस धारणा की पुष्टि होती है कि ईसा की 13वीं शताब्दी में लोग फिर यहां बसने शुरू हो गये थे।

रिणी से लगभग १५ मील उत्तर-पश्चिम म प्राचीन नगर भाड ग थेड है जो कभी बडा नगर था। सम्भवत यहा भी कोई जैन मन्दिर रहा रिणी के जैन मन्दिर में रखी हुई ११वी शताब्दी की दो मूर्तियों के सम्ब में कहा जाता है कि वे भाडग के थेड से प्राप्त हुई थी। गत वर्ष तक रिणी श्री शीतलनाथ जिनालय में दोनो मूर्तिया सुरक्षित थी, लेकिन अब सिर्फ ही मूर्ति शेष है।



रिणी (तारानगर) के जिनालय मे रखवी हुई दो प्राचीन मूर्तियाँ

अभी कुछ समय पूर्व स २०१३ चैत्र शुक्ला ७ को चूरू जिले के ए ग्राम अमरसर (नोखा सुजानगढ रोड पर) से १६ प्राचीन प्रतिमायें प्राप्त ह थी, जो इस वक्त बीकानेर सग्रहालय की शोभा बढा रही हैं। इन प्रतिमाओ से २ पाषाणमयी और १४ धातुमयी हैं। धातु प्रतिमाओ में से एक कमलास पर खडी सुन्दरी की मूर्ति है जिस का आकार १२"×४" है। मूर्ति अप्रति सौंदयमयी और कला की दृष्टि से बेजोड है। मूर्ति पर कोई अभिलेख नहीं लेकिन यह दसवीं शताब्दी की सभावित है। दूसरी एक अश्वारूढ देवी चतुर्भुजी मूर्ति है देवी अपने चारो हाथो में विभिन्न आयुध धारण किये हैं मूर्ति का आकार ४॥"×२॥" है। मूर्ति विक्रम की १२वी शताब्दी के प्रार की है और इस पर स ११११ का एक सक्षिप्त लेख है।

शेष सारी जिन प्रतिमाये है जिनमें से ६ पर लेख उत्कीर्ण हैं, इनमें से छः पर तो समय भी अङ्कित है। धातु प्रतिमाओ पर सं० १०६३ से ११६० तक के लेख है। धातु प्रतिमाओं मे से एक अम्बिका, नवग्रह, यक्षादि युक्त आदिनाथ पचतीर्थी है, जिसका आकार १२″×८″ है। इस पर सं० १०६३ का लेख है—

संवत् १०६३ चैत्र सुदि ३—तिभद्र पुत्रेण अल्लकेन महा (प्र) रामा कारिते। देव धर्म्मम्नाय सुरुप्सुता महा पिवतु।
शेष प्रतिमाओं में पार्श्वनाथ त्रितीर्थी, सप्तफणातीर्थी, पञ्चतीर्थी व चौमुख समवशरण आदि है।

दो पाषाण प्रतिमाओ में से एक बाईसवे जैन तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ की है, जो मकराने की बनी है। इसका आकार २१″×१७″ है, मूर्ति पर कोई अभिलेख नही है, लेकिन यह ईसा की बारहवी शताब्दी की अनुमानित है। दूसरी पाषाण प्रतिमा भगवान् महावीर की है। यह भी मकराने की बनी है। इसका आकार १७″×१४″ है तथा इस पर सं० १२३२ का लेख उत्कीर्ण है—

६ सवत् १२३२ ज्येष्ठ सुदि ३ श्री खडिल्ल गच्छे श्री वर्द्धमानाचार्य संताने साधु तेहड़ तत्पुत्र-राधराभ्या कारिता नव्यामूर्तिशाच ॥६

बीकानेर मे स. १६६२ चैत्र वदि ७ को श्री जिनचन्द्र सूरि ने ऋषभदेव मन्दिर की प्रतिष्ठा की। इसी दिन अमरसर के श्रावकों द्वारा निर्मापित श्री जितनाथ की प्रतिमा भी प्रतिष्ठापित हुई (सं. १६६२ वर्षे चैत्र वदि ७ दिने अमरसर। वास्तव्य श्रीमाल ज्ञातीय वहुअरा गोत्रे... श्री श्री अजित बिंबं कारितं...)। इन सब प्रमाणों से ज्ञात होता है कि चूरू जिले का यह ग्राम ...वी से लगाकर १७वी शताब्दी तक जैन धर्म का केन्द्र रहा है।

विक्रम की ११वी शताब्दी से लगाकर १३वी शताब्दी के मध्य तक ...जिले का यह भू-भाग और इसके आस-पास का क्षेत्र भी चौहान शासको के अधिकार मे रहा। १३वी शताब्दी के पूर्वार्द्ध में तो चौहान साम्राज्य का विस्तार बहुत अधिक बढ गया था और दिल्ली तब चौहान साम्राज्य का एक अंग थी। चौहान नरेशो ने जैन धर्म को भरपूर सरक्षण दिया, अतः उन के शासन काल मे इस सारे क्षेत्र मे जैन धर्म खूब फला फूला। उस समय चूरू

जिले के आस-पास कई नगर नोहर, पल्लू,[1] नरहड़ और लाडनूं[2] आदि भी जैन धर्म के केन्द्र थे।

नोहर में श्री पार्श्वनाथजी का एक जैन मंदिर है, जिसके शिलापट्ट पर सं० १०८४ का लेख है। रिणी के बाद प्राचीन जैन मंदिरों में इसकी गणना की जाती है। पल्लू से प्राप्त दो जैन सरस्वती प्रतिमाओं की कला तो बेजोड़ है। दोनों मूर्तियां श्वेत संगमरमर की हैं, जो डॉ० टसीटोरी को प्राप्त हुई थीं। दोनों मूर्तियाँ लगभग एक जैसी हैं परिकर सहित इनकी ऊंचाई ४ फुट ८ इंच है। इनमें से एक मूर्ति राष्ट्रीय संग्रहालय दिल्ली में प्रदर्शित है और दूसरी बीकानेर संग्रहालय में। इसी प्रकार नरहड़ से २ जैन मूर्तियां प्राप्त हुई हैं। एक मूर्ति कायोत्सर्ग करते हुए पञ्चम तीर्थङ्कर श्री सुमतिनाथ की है और दूसरी श्री नेमिनाथ की। दोनों ही मूर्तियां अप्रतिम सौंदर्यमयी हैं। लाडनूं का दिगम्बर जैन मंदिर भी बहुत पुराना है।

उपरोक्त जैन मंदिरों, मूर्तियों और अभिलेखों के आधार पर इस क्षेत्र में जैन धर्म के तत्कालीन वैभव और विस्तार का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। लेकिन सम्राट पृथ्वीराज की पराजय (वि सं १२४९) के पश्चात् विस्तृत चौहान साम्राज्य छिन्न भिन्न हो गया और जैन धर्म पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। १३वीं शताब्दी के मध्य से लगाकर १६वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक इस क्षेत्र की स्थिति अत्यन्त अस्थिर रही। सारा क्षेत्र छोटे छोटे टुकड़ों में बट गया। इस समय का कोई विशेष वृत्त प्राप्य नहीं है। १६वीं शताब्दी के मध्य तक राठौड़ों का शासन इस भू भाग पर जम गया। लड़ाई झगड़े होते रहने पर भी यह शासन पहले की अपेक्षा सुदृढ़ और सुस्थिर था। इसके बाद जैन धर्म की गतिविधियों के सम्बन्ध में फिर से कुछ जानकारियां मिलने लगती हैं राठौड़ों का शासन स्थापित होने के बाद चूरू जिले में कई जैन मंदिरों, दादाबाड़ियों और उपाश्रयों आदि का निर्माण हुआ। जैन आचार्यों, भट्टारक

---

1 नोहर व पल्लू आदि पहले चूरू जिले की एक तहसील रेणी (तारानगर) के अन्तर्गत थे। रे(णी) उन दिनों भूतपूर्व बीकानेर राज्य की एक निजामत थी जिसके अन्तर्गत नोहर तहसील भी थी लेकिन अब नोहर तहसील को चूरू जिले से निकालकर जिले श्री गंगानगर में मिला दिया ग(या) है जिससे राजनैतिक दृष्टि से यह भूभाग चूरू जिले से अलग हो गया है।

2 लाडनूं भी कभी छापर द्रोणपुर के मोहिलों के अधिकार में था किन्तु बाद में राव बीका[illegible] कर अपने मित्र राव [illegible] के कहने पर उन्हें दे दिया जिससे वह मारवाड़ (जोधपुर) का अंग बन गया।

तियों और मुनियों का जनता और शासन पर यथेष्ठ प्रभाव रहा और चूरू
ज़ले की जनता ने भी जैन धर्म को अपना योगदान दिया।

आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व जैन श्रमण संघ श्वेताम्बर और
बर नामो से दो सम्प्रदायों मे बट गया था। आगे चलकर इन दोनों में से
नेक उप सम्प्रदाय बने। श्वेताम्बर सम्प्रदाय में अनेक गच्छों (गणो) की
ना समय समय पर होती रही। इन मे से जिन गच्छों का यहा विशेष
व रहा, उनके सम्बन्ध में कुछ प्रकाश डालने का प्रयत्न किया जायेगा।

तरगच्छ

खरतरगच्छ एक प्रभावशाली गच्छ रहा है और इस गच्छ को चूरू
ो की महत्त्वपूर्ण देन है। विक्रम की सतरहवी शताब्दी के प्रारंभ से ही
सवध मे उल्लेख प्राप्त होने लगते है। युगप्रधान जिनचंद्र सूरि जी (६) ने
सं. १६२५ मे चूरू जिले के वापड़ाऊ (वापेऊ) ग्राम में और १६३७ में सेरूणा
म (तहसील डूंगरगढ) मे चातुर्मास किया था। इसके पश्चात् जब बादशाह
कबर ने विशेष आग्रह कर के उन को लाहौर आने के लिये आमन्त्रित किया
वे चूरू जिले के अनेक गांवों, वापेऊ, पड़िहारा, मालासर आदि होते हुए
णी[1] पहुँचे। वहां के लोगों ने सूरिजी का स्वागत किया। समस्त संघ के
ाथ मत्री ठाकुरसिह के पुत्र रायसिह ने प्रवेशोत्सवादि कर के गुरु भक्ति की।
हां महिम का संघ सूरिजी के दर्शन करने के लिए आया, श्री शीतलनाथ
वामी के प्राचीन भव्य जिनालय के दर्शन पूजन कर सूरिजी को वंदन कर
गया और तब सूरिजी ने लाहौर की ओर प्रस्थान किया।

युग प्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि (६) के स्वर्गवास (सं. १६७०) के पश्चात्
: श्री जिनसिंह सूरि, श्री जिनराज सूरि (२), श्री जिनरत्न सूरि, श्री
न्द्र सूरि (७), श्री जिनसुख सूरि, श्री जिनभक्ति सूरि, श्री जिनलाभ सूरि,
जिनचन्द्र सूरि (८), श्री जिनहर्ष सूरि, श्री जिन सौभाग्य सूरि, श्री जिन-

---

कविवर समय सुन्दरोपाध्याय कृत युग प्रधान श्री जिनचन्दसूरि अष्टक में भी रिणी का उल्लेख हुआ है—

"मारवाड़ रिणी गुरु वन्दन को, तरसै सरसै विच वेग वहै।"

सतरहवीं शताब्दी के उपाध्याय ललितकीर्ति के शिष्य राजहर्ष ने "श्री जिनकुशल सूरि अष्टोत्तर-शत स्थान थुंभ स्थान गर्भित स्तवन" बनाया है, जिसमें अमरसर, नवहर और रिणी के नाम मिलते हैं। बहुत संभव है कि चूरू जिले के कुछ गाव श्री जिनकुशल सूरि जी (सं. 1337–1389) के विचरण स्थल रहे हों। चूरू व चूरू जिले के कई कसबों में इनकी चरण पादुकाएं स्थापित हैं।

हस सूरि और श्री जिनचद्र सूरि (६) आदि आचाय हुए जिनम से ३ प्रभावशाली आचाय तो चूरू जिले के ही थे और शेष का भी चूरू जिले से काफी सपर्क रहा।

सत्रहवी शताब्दी के प्रतिभा-सम्पन्न आचाय श्री जिनराज सूरि ने स १६५६ म जिनसिंह सूरिजो से दीक्षा ली थी। इनके पट्टधर श्री जिन रत्न सूरि जी चूरू जिले के ग्राम सेरूणा (त० डूगरगढ) के लुणिया तिलोकसी का पत्नी तारादेवी के पुत्र थे।

श्री जिन रत्न सूरि जी के पट्टधर श्री जिनचन्द्रसूरिजी (७) थे। सुप्रसिद्ध जन विद्वान् सम्मान्य श्री अगरच दजी नाहटा ने बीकानेर से पत्र द्वारा सूचित किया है कि स १७३७ म जिनचद्र सूरि जी ने वा० हेमप्रमोद को चूरू जाने का आदेश दिया था। स १७३८ मे वा० हेमप्रमोद चूरू रहे। इसके बाद भाग्यवद्ध नजी चूरू रहे।

श्री जिनचद्र सूरि जी के पट्टधर श्री जिनसुख सूरि जी चूरू जिले के ग्राम फोगपत्तन (फोगा ग्राम, त० सरदारशहर) के थे। जिनसुख सूरि जी बडे प्रभावशाली आचाय हुए। बीकानेर नरेश महाराजा सुजानसिंहजी (स १७५७—६२) जिन सुख सूरि जी में बडी श्रद्धा भक्ति रखते थे। महाराजा द्वारा सूरि जी को लिखे गये दो पत्र श्री अगरच दजी नाहटा, बीकानेर के सग्रह म हैं,[1] जिनको देखने से ज्ञात होता है कि महाराजा उनका अत्यधिक सम्मान करते थे। सवत् १७७६ के भाद्रवा सुदि १४ को श्री सूरि जी द्वारा फलोदी के सघ को लिखा गया पत्र भी नाहटा जी के सग्रह मे है। संभवत स १७६६ म आप विहार करते हुए जैसलमेर पधारे थे। जैसलमेर म श्री जिन कुशलसूरि जी की छत्री के समीप बनी हुई प्रतिशाला के लेख से इसका अनुमान होता है।

श्री जिन सुख सूरि जी स १७८० म देवलोक हुए जिन की चरण-पादुका तारानगर (रिणी) के श्री शीतलनाथजी के मन्दिर में है। इसकी स्था-

---

1 नाहटा जी ने ये पत्र "बीकानेर जैन सग्रह में प्रकाशित करवा दिये है।

2 श्री सवज्ञाय नम। स्वस्ति श्री विक्रमादित्यराज्यात् सवत् 1769 वर्षे भट्टारक श्री जिनसुख सूरिविजयमानेषु श्री जेसलमेरु महा दुर्गे म ।



चूरू जिले के सुप्रसिद्ध आचार्य श्री जिनसुखसूरिजी

पना उनके पट्टधर श्री जिनभक्ति सूरि ने की।[1]

श्री जिनसुख सूरि जी के पट्टधर श्री जिन भक्ति सूरि जी चूरू जिले के एक गाव इन्दपालसर (त० डूगरगढ) के थे। महराजा सुजानसिंहजी इनका भी खूब सम्मान करते थे। श्री जिनकुशल सूरि स्तवन म सूरि जी ने महाराजा की शत्रुओ से रक्षा करने का उल्लेख किया है[2]। सुजानसिंहजी के उत्तराधिकारी महाराजा जोरावरसिंहजी भी इनके पूरे भक्त थे।

स १८०१ का एक सचित्र विज्ञप्ति पत्र बीकानेर म है जो श्री सूरिजी की सेवा में भेजा गया था। विज्ञप्ति लेख टिप्पणाकार है उसके मुखपृष्ठ पर "बीनती श्री जिन भक्ति सूरि जी महाराज ने चित्रो समेत" लिखा है। विज्ञप्ति लेख ६ फीट ७॥ इन्च लम्बा श्रोर ६ इच चौडा है। ऊपर का ७॥ इन्च भाग खाली है जिस म मगलसूचक "श्री" लिखा है। शेष ५ फुट म चित्र श्रोर ४ फुट मे विज्ञप्ति लेख है। लेख मे अन्य अनेक चित्रों के साथ महाराजा बीकानेर (जोरावरसिंह जी) व जिन भक्ति सूरि जी का चित्र है। सूरि जी सिंहासन पर विराजमान हैं पीछे चवरधारी खडा है उन के सामने स्थापनाचार्य तथा हाथ में लिखित पत्र है। वे जरी की बूटियो वाली चद्दर ओढ हुए व्याख्यान देते हुए दिखलाये गये हैं। सामने तीन श्रावक, दो साध्विया व दो श्राविकाए हैं।

---

1 सवत् 1780 वर्षे शाके 1645 प्रवर्तमाने ज्येष्ठ मासे कृष्ण पक्षे 10 तिथौ शनिवारे भट्टारक श्री जिनसुखसूरिजी पेखमोन गतः तेषां पादुके श्री रेणी मध्ये भट्टारक श्री जिनभक्तिसूरि भिः प्रतिष्ठित शुभ भूयात्। माह सुदि 6 तिथौ।

चरण पादुका की पूजा के लिए बीकानेर राज्य की ओर से निश्चित राशि बंधी हुई थी— श्री बीकानेर रा मांडिया निवासनु रिणी रा मांडविया जोग तथा पूज श्रीजिनसुखसूरिजी री छतरी पादका रे पूजा मूल्य रा 15। थारे पड़ते राज खिचियां री मोदे पाड़ मुरारे सुबरे भट पेलां स० 1783 मगसर सुदी दुवा तदु रे जाद उगायरे म सरकार रे देजो।

2 परतिख परचो पामियो श्री बीकाण नरेश।

× × ×

सुजाणसिंह नरराज ने अरियन लियो उबार ॥

(गुरु गुण रत्नावली, पृ० 6

इसी पुस्तक मे यह भी ज्ञात होता है कि श्री जिनभक्तिसूरिजी ने पूना में होने वाले किसी वाद विवाद में विजय प्राप्त की थी—

पट्ट परंपर धम धुरंधर श्री जिनभक्ति सूरीश्वर राजा,
पूने में वाद विवाद सह्यो जस सेवाजी राव के सन्मुख ताजा,
हार गये वेदान्त मती गुरुदेव के वाजे अविचल बाजा, (पृ० १२

सूरि जी ने बहुत दूर दूर तक घूम कर जैन धर्म का प्रचार किया। सं. १८०४ में ये दिवंगत हुए। इनकी चरण पादुका श्री अमृतधर्म स्मृतिशाला, जैसलमेर में स्थित है, जिसका लेख निम्न है—

सं. १८०४ मिते ज्येष्ठ सुदि ४ तिथौ श्री कच्छ देशे मांडवी बिंदरे स्वर्गगतानां श्री जिन भक्ति सूरीणां पादन्यासः सं. १८५२ मिते पोष सुदि ५ तिथौ कारितं श्री सघेन प्रतिष्ठितश्च वा० क्षमाकल्याण गणि भिः

श्री जिन भक्ति सूरिजी के पट्टधर श्री जिनलाभ सूरिजी और उन के पट्टधर श्री जिनचन्द्र सूरिजी (८) थे जो सं० १८५० में चूरू में सपरिकर विराजते थे।[1] चूरू से श्री अमृत गणि के नाम लिखा गया एक पत्र चूरू के सुराना पुस्तकालय में है जो निम्न है—

॥ श्रीः ॥

॥ स्वस्ति श्री पार्श्वेशंप्रणम्या श्री चूरू नगरा भट्टारका श्री जिनचन्द्र-सूरिवराः सपरिकराः। श्री रिणी नगरे ॥ वा० ॥ अमृत सुंदर गणि योग्यं। ामनुनम्य। समा दिशंति।... तथा तुम्हनुं आदेश श्री फरकावाद नौ छै। तत्र हुचेज्यो। घणी शोभा लेज्यो। शिष्या नुं हित शिक्षा माहे राखेज्यो। श्री ंघ राजी रहै तिम प्रवर्त्येज्यो। समस्त श्रावक श्राविका नु धर्म लाभ क। ळता पत्र देज्यो। मिती फागुण वद १० सवत् १८५० रा।

सं० १८५० के वैशाख सुदि ३ को आपने चूरू के श्री संघ द्वारा बनवाई ई श्री जिनकुशल सूरिजी की पादुका चूरू के शान्तिनाथ मंदिर में स्थापित ी जिसका लेख निम्न है—

संवत् १८।५० मिते वैशाख शुक्ल ३ भृगुवासरे बृहत्खरतर गच्छे भ० ां० यु० भ० श्री जिनकुशल सूरि पादुका चूरू श्री संघेन कारिता प्रतिष्ठितं च० ं० ज० भ० श्री जिनचन्द्रसूरिभिः।

माघ शुक्ला ५ सं० १८५० को चूरू की दादाबाडी में श्री जिनकुशल ूरिजी और सं० १८५१ वैशाख सुदि ३ को श्री जिनदत्त सूरिजी की चरण ादुकाये स्थापित की[2] गईं। आप के पट्टधर श्री जिन हर्ष सूरिजी भी चूरू

1. सम्मान्य श्री अगरचन्दजी नाहटा ने बीकानेर से सूचित किया है कि संवत् 1844 के वैशाख मास में भी श्री जिनचन्द्र सूरिजी चूरू में थे।

2. सं० 1850 मिते माघ शुक्ला 5 श्री जिनकुशल सूरि पादुके कारिते वा० चारित्र प्रमोद गणिना प्रतिष्ठिते च॥ श्री बृहत्खरतर गच्छे। भ। जं। यु। भ। श्री जिनचन्द्रसूरिभिः।
॥संवत् 1851 वर्षे वैशाख सुदि 3 तिथौ शुक्रे श्रीमत् श्री जिनदत्तसूरि सुगुरुणां चरणांबुजे सकलसंघेन विन्यसिते प्रतिष्ठिते च। भ। श्री जिनचन्द्रसूरिभिः श्री चूरू नगरमध्ये शुभं भवतुतरामिति ॥

पधारे। स० १८६५ में जयराज गणि के शिष्य चारित्र प्रमोद गणि ने मा सुदि ५ को अपने गुरु की पादुका श्री जिनहर्ष सूरिजी से प्रतिष्ठा करवा क दादावाडी म स्थापित की। इसी प्रकार स० १८६१ मे श्री सागरचन्द्र शाखा वे श्री चन्द्रविजय मुनि की पादुका गुण प्रमोद मुनि ने और चारित्र प्रमोद गणि की पादुका उन के शिष्य कीर्ति समुद्र मुनि ने श्री जिनहर्ष सूरिजी से प्रतिष्ठापित करवाई। श्री जिनहर्ष सूरिजी के पट्टधर श्री जिनसौभाग्य सूरिजी भी चूरु पधारें (सभवत् यहां के शान्तिनाथ मदिर म सवत् १९०५ म आपने बिंब प्रतिष्ठा



श्री जिन भक्ति सूरि

की[1] और सं० १६१० में श्री जिनदत्तसूरिजी की पादुका स्थापित की)।

आप के पट्टधर श्री जिनहंस सूरिजी स० १६१६ में बीकानेर से चल कर कई ग्रामों में होते हुए राजगढ पधारे थे। राजगढ (चूरू जिले का एक कसबा) के सुपार्श्वनाथजी के मंदिर के भित्ती लेख में उस यात्रा का कुछ वर्णन अंकित है, जिसे पढने से उस समय की स्थिति पर अच्छा प्रकाश पडता है—

सं० १६१६ रा मिती मिगसर सुदि ३ दिने। जं०यु०प्र० भट्टारक वृहत्खरतर गच्छे वर्तमान भ०। श्री जिनहंस सूरिवराः स परिकराः श्री बीकानेर सुं विहारी ग्रामा नु ग्राम वंदावी। श्री सरदारशहर बडोपल हनुमानगढ टीवी खडियाला राणिया सरसा नोहर भादरा राजगढ श्री जी महाराज पधार्या संवत् १६२० रा० मि० वैमा० सुद ६ श्री संघ हाकम कोचर मुंहता श्री फतेचन्दजी कालूराम जी बडे हंगाम सुं नगारो नीसाण घोडा प्रमुख इसदी आदि देकर सामेलो कीयो श्री साधु साथे विहार में वा० नन्दरामजी गणि पं० प्र० चिमनीरामजी आदेशी प० प्र० देवराजजी मुनि प०प्र० आमकरणजी मुनि पं०प्र० रुघजी मुनि राजसुख जी पं० प्र० लछमणजी गणि पं० गोपीजी मुनि पं० हीरोजी पं० प्र० केवलजी मुनि पं० प्र० शिवलाल मुनि प० प्र० अबीरजी मुनि पं० प्र० गुलाबजी वा० बुधजी ठा० १ पं० हिमत् मुनि पं० गुमान श्री राहसरीयो पं० सोमो पं० रुघलो पं० सुगणानन्द पं० वनोजी चिरं सदासुख चि० बीभो ठाणे ४१ साधु सर्व —पं० प्र० कचरमल्ल मुनि महाराज के साथ आदमी प्यादल रथ १ चपरासी हलकारे राजरो पौरो १ छडी छडीदार सेवग सुगणो चांदी री छडी १ सेवग बारीदार चौथूजी विरधो नाइ २ नवलो मुलतानो दरजी... तिनतस संवत् १६२० दीक्षा महोच्छव साधु २ योनै मि० वै० सुद १० दिन भई वणारस पं०—मि० वै० सु० १३ राजगढ में खमासण ७ मिठाई ४ सीरे री ३ लूदीवास मे १ मि० जेठ बदी ३ दिने रिणी नै विहार कर्यो सतरभेदी पूजा हुई मि० जे० ब० २ नव अंगी ७ पं० प्र० चीमनीरामजी पं०...मुजमानी ११ भेट भई वेगार ऊंठ २५।

उपरोक्त विवरण से ज्ञात होता है कि राज्य की ओर से भी जैन आचार्यों को पूर्ण सम्मान प्राप्त था और राज्य सरकार उन की सुख सुविधा का ध्यान रखती थी। जब जैन आचार्य किसी कसबे में पधारते तो स्थानीय हाकिम पूरे लवाजमे के साथ उन की अगवानी को जाते थे। आचार्य गण पूरे परिकर सहित यात्रा करते थे। दीक्षाए समारोह पूर्वक होती थी। राजगढ में लगभग

---

[1] सं० 19०5 वर्षे वैशाख मासे पूर्णिमास्यां तिथौ श्री मुनिसुव्रतजिन बिंबं कारापितं प्रतिष्ठितं ... जं० यु० प्र० भ० श्री जिनसौभाग्यसूरिभिः।

२० दिन तक ठहरने के बाद सघ ने रिणी की तरफ प्रस्थान किया और सभवत चूरू जिले के सभी प्रमुख स्थानो मे पहुँचा होगा। सवत् १९३३ मे श्री जिनहस सूरि जी के चूरू पधारने का उल्लेख प्राप्त है। इस वर्ष माघ सुदि ५ को मुनि आनदसोम ने श्री यशराज मुनि की पादुका श्रीजिनहस सूरिजी से प्रतिष्ठापित करवाई[1]। आप के पट्टधर श्री जिनचन्द्र सूरि जी (६) स० १९४० मे चूरू पधारे और आपने दादाबाडी में चरण पादुका स्थापित की[2]। इस प्रकार यह क्षेत्र जैन आचार्यों, श्री पूज्यो, भट्टारको, यतियो और सन्तो का विचरण स्थल बना रहा।

चूरू मे खरतर गच्छ का बडा उपाश्रय, श्री शान्तिनाथजी का मन्दिर और दादाबाडी है। इन का निर्माण समय तो अज्ञात है, लेकिन इतना अवश्य कहा जा सकता है कि स० १८३९ से पूर्व उपाश्रय या मन्दिर का निर्माण हो चुका था।[3] मन्दिर में मूल नायक श्री शान्तिनाथजी की मकराने की मूर्ति बडी भव्य है जिस पर सवत् १६८७ वैशाख शुक्ला ३ का लेख है—

सवत् १६८७ वैशाख शुक्ला ३ श्री विजयसेन सूरि पट्टालकार तपाविरु धारक भट्टारक विजयदेवसूरिभि आचार्य श्री विजयसिंहसूरि सुपरिकारितं।

मकराने की २ अन्य मूर्तिया हैं जिन की बिम्ब प्रतिष्ठा स० १९०५ में हुई है। धातु प्रतिमाओ पर स० १५०३ से स० १८२६ तक के लेख हैं। आलो में चरण पादुकाए स्थापित हैं, जिन पर स०१८५० और१९१० के लेख हैं। मन्दिर पुराना है, लेकिन इस का सागोपाग जीर्णोद्धार यतिवर्य ऋद्धिकरणजी ने बड़ी धन राशि व्यय कर के स०१९९१से ९६तक बहुत सुन्दर करवाया है। मन्दिर में बहुत आकर्षक और कलापूर्ण सुनहरी चित्रकारी करवाई गई है, जो अत्यंत नयनाभिराम है। जीर्णोद्धार का लेख निम्न है—

---

1 स० 1933 मिति माघ सुदि 5 भृगुवासरे श्री बृहत्खरतर गच्छे प० प्र० श्री यशराजजी मुनि पादुके श्री चूरू प० आणदसोमेन कारित प्रतिष्ठित भ। भ। ज। भ।श्री जिनहंससूरिभि

2 स०द् 1940 वर्षे शाके 1805 मिति वैशाख मासे शुक्ल पक्षे 3 तृतीयायां तिथौ बुधवार भ। य। दादाजी श्री जिनचन्द्रसूरिजी चरण पादुका भ। श्री जिनचन्द्रसूरिभि प्रतिष्ठित श्री संघेन कारापिता ॥

3 उपाश्रय के ग्रन्थ भण्डार में गुरुजी जैन श्री चतुरभुजजी जिमनरामजी के नाम का एक पत्र है जो राजगढ़ के भांडिया ने उन के नाम आसोज सुदि 3 स० 1839 को लिखा है से अनुमान होता है कि उस समय से पूर्व चूरू में उपाश्रय और मन्दिर बन चुके चूरू ठाकुर श्योजीसिंह (स० 1840-71) के समय में यति चतुरभुजजी को 101 जमीन दी गई थी जिस का पट्टा चूरू के खालसा हो जाने पर स० 1877 में बीकानेर की ओर से बना था जिसका कागज उपाश्रय के ग्रन्थ भण्डार में है।

अस्य देवालयस्य जीर्णोद्धार कारापिता पं० प्र० श्रीमन्तो यतिवरा ऋद्धकरण नाम धेया महोदया। सन्ति ॥ यह धार्मिक महान् कार्य आप के ही प्रयत्न से हुआ है यह जीर्णोद्धार सं० १९८१ से प्रारम्भ हो कर सं० १९८६ तक समाप्त हुआ है।



चूरू में मूल नायक श्री शांतिनाथजी की भव्य प्रतिमा

मन्दिर के गर्भगृह का द्वार चांदी का बना है, जिसपर सं० १९८५ का लेख है। मन्दिर से संलग्न बड़ा उपाश्रय है जिस में यतिजी स्वयं एक आयुर्वेदीय औषधालय का संचालन करते थे और एक संस्कृत पाठशाला भी चलती थी। औषधालय तो अभी भी चल रहा है। उपाश्रय में एक ग्रंथ भण्डार है जिस में प्रकाशित पुस्तकों के अतिरिक्त हस्तलिखित[1] ग्रंथों और पट्टावलियों आदि का अच्छा संग्रह है।

---

1. हस्त लिखित ग्रन्थों में कुछ के नाम इस प्रकार हैं—(1) वचनिका राठोड राउ महेसदासोतरी (सं० 1794), (2) महाराजा रतन महेंसदासोतरी वचनिका खेडिया जागारी कही,(सं०1774) (3) अमृतवेलि (सं० 1724) (4) चन्दनमलया गिरि (सचित्र, सं० 1741), (5) बीकानेर की गजल (सं० 1765)।

परिशिष्ट–२

तेरापंथ के उद्भव सं० १८१७ से सं० २०२३ वि० माघ सुदि ७ तक पंथ में कुल २०४३ दीक्षाएं निम्न रूप में हुई —

जाति—	साधु—	साध्वी—
ओसवाल	६०१	१२६८
अग्रवाल	४६	२६
पोरवाल	२८	५१
सरावगी	६	७
माहेश्वरी	३	४
सुनार	१	१
कुम्हार	०	१
कुल	६८५	१३५८ =२०४३

माघ सुदी ७ सं० २०२३ वि० को तेरापंथ संघ में १६१ साधु और ५०० साध्वियां थीं—

जाति—	साधु—	साध्वी—
ओसवाल	१५७	४७६
अग्रवाल	२	१५
पोरवाल	२	९
कुल	१६१	५०० = ६६१

उपरोक्त ६६१ साधु साध्वियों में से ३६९ (७८साधु और २९१ साध्वियां) चूरू जिले के थे। आंकड़ों के हिसाब से निकाला जाए तो कहना होगा कि तेरापंथ की लगभग ५६ प्रतिशत संत संपदा चूरू जिले की है।

परिशिष्ट—३

आधार सामग्री

अग्रवाल जाति का इतिहास, दूसरा भाग।
अणुव्रत पत्रिका।
इम्पीरियल गेजेटियर ऑव इंडिया।
ओसवाल जाति का इतिहास।
कैटेलॉग एण्ड गाइड गंगा गोल्डन म्यूजियम, बीकानेर।
जैन भारती विवरण पत्रिका, वर्ष १६, अंक ८-९।
तेरापंथ का इतिहास (खण्ड-१), मुनि श्री बुद्धमलजी।
दादावाड़ी दिग्दर्शन— सं० पं० मदनलाल जोशी।
दादा श्री जिनकुशल सूरि—श्री अगरचन्द भंवरलाल नाहटा।
देश के इतिहास में मारवाड़ी जाति का स्थान— श्री बालचन्द मोदी।
पाणिनि कालीन भारतवर्ष— श्री वासुदेव शरण अग्रवाल।
बाबू छोटेलाल जैन स्मृति ग्रंथ—
बीकानेर जैन लेख संग्रह— श्री अगरचन्द, भंवरलाल नाहटा।
बीकानेर राज्य का इतिहास— डा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा।
मरु-भारती (शोध पत्रिका), सम्पादक डा० कन्हैयालाल सहल।
युगप्रधान श्री जिनचन्द्र सूरि— श्री अगरचन्द भंवरलाल नाहटा।
राजस्थान पुरातन ग्रंथ माला, हस्त लिखित ग्रंथों की सूची भाग १।
राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा— श्री अगरचन्द नाहटा।
राजस्थानी हस्त लिखित ग्रंथ सूची भाग १-२
सेन्सस ऑव इंडिया-१९३१, जिल्द १, बीकानेर स्टेट, भाग २।
श्री गुरु गुण रत्नावली— उ० प्राणाचार्य आदि
श्री जिनऋद्धिसूरि जीवनप्रभा (गुजराती), श्री गुलाब मुनि।
श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय नामावली- श्री लिखमीचन्द डूंगरवाल।
श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्रार्थ मोटर यात्रा दर्पण।
श्री दिगम्बर जैन मंदिर चूरू, खरतरगच्छ व लौंकागच्छ के उपाश्रय, सुराना पुस्त० नगर श्री संग्रहालय चूरू, आदि से प्राप्त सामग्री. रुक्के, परवाने, गुटके, हस्तलिखित ग्रंथ, पत्र, मन्दिरों दादावाड़ियों के लेख, परिचय पत्र आदि।
श्री अगरचन्दजी नाहटा के कतिपय पत्र। लेख में मुद्रित श्री जिनसुखसूरिजी व जिन भक्ति सूरिजी के ब्लाक भी श्री अगरचन्दजी नाहटा के सौजन्य से प्राप्त हुए। शेष सारे ब्लाक नगर-श्री संग्रहालय की संपत्ति हैं।



चूरू जिले के अमर-सर गाव से प्राप्त ११वी शती की कला पूरी मूर्ति का रेखा चित्र

ब्लॉक बीकानेर संग्रहालय के सौजन्य से प्राप्त

न
ग
र
श्री
का
गौ
र
व



पू
री
प्र
का
श
न



F10/62—EM

शिक्षा मन्त्री, भारत
EDUCATION MINISTER
INDIA

नई दिल्ली, २३ जनवरी, १९६९

प्रिय श्री अग्रवाल,

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि राजस्थान के निर्भीक सपूत स्वामी गोपालदासजी का जीवन चरित्र 'नगर-श्री', चुरू द्वारा प्रकाशित किया गया है। निस्संदेह स्वामी गोपालदासजी भारत माता के उन महान् सपूतों में से एक थे जिन्होंने अपने जीवन की आहुति देकर भारत माता को बन्धन मुक्त करने के लिये आगे कदम बढ़ाया। 'नगर-श्री' का यह प्रयास सर्वथा सराहनीय है और मैं आशा करता हूँ कि आज की परिस्थितियों में देश के निर्माण में लगे हुए सभी देशभक्तों को इससे पर्याप्त प्रेरणा मिलेगी।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित,

आपका
त्रिगुण सेन
(त्रिगुण सेन)

श्री सुबोधकुमार अग्रवाल,
सचिव, 'नगर-श्री',